ब्राह्मणवाद :
भारत का अभिशाप

वी. टी. राजशेखर

1996 रु: 10

ब्राह्मणवाद :
भारत का अभिशाप

वी. टी. राजशेखर

1996

रू. 10

दलित साहित्य अकाडेमी
109, 7 वाँ क्रास, पैलेस लोयर आश्चर्ड्स
बेंगलूर -560 003

"Brahmanvad : Bharat Ka Abhishap" - Translated from English "Brahminism: The Curse of India" written by **V. T. Rajshekar,** published by Dalit Sahitya Akademy, No. 109, 7th Cross, Palace Lower Orchards, Bangalore - 560 003.

1996

Rs. 10

Copyrights with the Author

Print Media
Bangalore - 560 003

ब्राह्मण और ब्राह्मणवाद

सुब्रमण्या भारती : तमिल के सर्वप्रसिद्ध आधुनिक कवि जो स्वयं एक समर्था ब्राह्मण थे कहते हैं -- इस से मुझे बडी वेदना होगी, ठीक उसी तरह जैसे दूसरों को, यदि मैं उन सारे क्षणिक उपायों का समर्थन करूँ जिन के द्वारा आज का ब्राह्मण इस अयोग्य माँग की रक्षा का प्रयत्न करता है कि वही और केवल वही अध्यात्मिक श्रेष्ठता का स्वामी है । अब, जबकि भारत एक नये युग के लिए जागृत हो रहा है, यह बात मेरे ब्राह्मण - देशवासियों के हित में होगी कि वे स्वेच्छा से अपने सारे पुराने पाखण्डों को, उन मूर्ख व देशद्रोही प्रथाओं समेत (सहित) जिनका आधार केवल ढोंग है, पूरी तरह त्याग कर एक ऐसी संस्थापना का नेतृत्व करें जिसमें सब भारतीयों के लिए स्वतन्त्रता, समानता, भाईचारा हो ।

ब्राह्मण, भारत की पुरोहित-शाही जाति है । इस के साथ ही यह संसार की सब से अधिक अहंकारी और सत्ता की भूखी जाति है । क्योंकि न केवल वे जन्म-से श्रेष्ठतम होने का ज़ोरदार दावा करते हैं बल्कि खुद को दैवी-मूल की संतान कहते हैं ।

("इण्डियन अनरेस्ट" – वेलेन्टीन चिरोल मेकमिलन एण्ड कं., लण्डन, 1910, पृष्ठ - 32)

के. श्रीनिवास राव (जो खुद तंजाऊर ज़िले के एक दसास्था ब्राह्मण और एक मराठी भाषणकार भी थे) कई वर्षों तक यह कहते रहे कि भारत को तब तक राजनीतिक विकास की आशा नहीं करनी चाहिए जब तक यहाँ प्रस्तुत समाज-विभाजक जाति-पद्धति को बंद नहीं कर दिया जाता । अपनी पुस्तक 'प्रेज़ेन्ट पोलिटिकल अनरेस्ट इन इण्डिया" 1908, में वे लिखते हैं -- जब तक कि भूमि साफ नहीं की जाती, पत्थर और चट्टानें हटा दी नहीं जातीं, राष्ट्रीय-जीवन की बुनियाद चौड़ी और गहरी नहीं कर दी जाती और जीवन एवं हित के केन्द्र को व्यक्ति से बदलकर सिद्धान्त को नहीं बनाया जाता और उत्तरोत्तर का केन्द्र विभिन्न जातियों, वर्गों तथा सम्प्रदायों को नहीं बनाया जाता; और जब तक हमारी राजनीतिक सहानुभूतियाँ ऐयरों, अयंगारों और रावों की सीमाओं को लांघकर, अन्य मानवों के एक विस्तृत वृत्त में नहीं फैलती – ब्राह्मण और ब्राह्मणेतर का अतिक्रमण किसी भी विशाल-मात्रा में जनतन्त्र एक खतरनाक भ्रम होगा, धोखा होगा । (यूजीन. एफ़. इरशिक – " पालिटिक्स एण्ड सोशियल कानफिलिक्ट इन सौथ इण्डिया", यूनीवर्सिटी ऑफ क्यालीफ़ोर्निया प्रेस, बर्कली एण्ड लॉस एँजलिस, 1969 पृष्ठ - 40-41)

द्वितीय प्रकाशन पर प्रस्तावना

भारतीय एवं विदेशी, समस्त चिन्तक समुदाय अब इस तथ्य को समझने लगे हैं कि केवल ब्राह्मणवाद ही के कारण भारत अब तक दरिद्र और उपहास-पात्र बना हुआ है । आज तक इस सत्य का विद्वत्तापूर्ण तर्क द्वारा कोई भी खण्डन नहीं कर पाया है ।

किसी भी मात्रा में किया गया आर्थिक विकास भारत की वर्तमान स्थिति को नहीं बदल सकता । क्योंकि इसकी यह लोकप्रसिद्ध दरिद्रता आर्थिक कारणों से नहीं है अपितु सामाजिक व सांस्कृतिक तत्व हैं जिनकी जडें ब्राह्मणवाद में छिपी हुई हैं । कई मार्क्सवादी विद्वान तक इस विचार से सहमता होने लगे हैं । ब्राह्मणवाद, जिसका वैज्ञानिक नाम हिन्दूवाद रक्खा गया है, यह ईसाइयत, इसलाम या बुद्धमत जैसा धर्म नहीं है । यह एक मानसिक तन्त्र है, एक फंदा है । इस तन्त्र का समर्थन करने वाले ब्राह्मण भी होते हैं या क्षत्रीय, वैश्य और उच्च श्रेणी के जमीन्दार शूद्र जैसी ब्राह्मणो से बाहर वाली जातियाँ भी हो सकती हैं । वास्तव में कुछ ब्राह्मणेतर जातियाँ ऐसी हैं जो इस तन्त्र के प्रवर्तक ब्राह्मणों से अधिक इसका प्रचलन रखते हैं । कुछ अछूत और आदिवासी तक ब्राह्मणीकरण का शिकार होते जा रहे हैं । यह नासूर (केन्सर) फैलता ही चला जा रहा है । लेकिन चाहे वे ब्राह्मण हो या ब्राह्मणेतर, इस अमानुष तन्त्र को पकडे रहने से किसी का उद्धार नहीं हुआ सिवाय इसके कि बलवान को दुर्बल का शोषण करने की सुविधा मिली और पुरुष को स्त्री का शोषण करने की । अपने सम्मेलनों तथा अखबारी लेखों मे स्वयं ब्राह्मण अपनी गरीबी और उपेक्षित होने की शिकायत करते हैं । इसका तात्पर्य यह हुआ कि इस तन्त्र को हज़ारो वर्ष तक पकडे रहने और हर एक को बेचते रहने के बावजूद स्वयं इस तन्त्र के निर्माता इस से कोई लाभ नहीं उठा सके हैं । वाह ! कैसी शपित उपज है यह ! ब्राह्मण, जो खुद को भारत की जातियों में सर्वश्रेष्ठ समझते हैं, इस तन्त्र से कोई सहायता नहीं पा सके हैं । स्त्रियाँ, यहाँ तक कि ब्राह्मण स्त्रियाँ भी इस शपित तन्त्र का बुरी तरह से शिकार हुई हैं । इसीलिए न केवल भारत के हित की दृष्टि से बल्कि स्वयं इस तन्त्र के प्रवर्तक ब्राह्मणों के हित के लिए भी इस को नष्ट कर देना अनिवार्य हो जाता है । ऐसा कठिन कार्य चुनावों पर आधारित संसदीय या अध्यक्ष-सम्बंधी प्रणाली वाली सरकार के हाथों होना सम्भव नहीं है । संसद से बाहर रहकर ही ब्राह्मणवाद के विरुद्ध संग्राम करना पडेगा । क्योंकि इस का निवारण किसी कानून द्वारा नहीं हो सकता । ब्राह्मणवाद के खिलाफ इस युद्ध का आरम्भ सब से पहले हमारे मस्तिष्क में हो, फिर घरों में और उसके बाद गलियों में फैलकर सारे देश को इसमें बहा ले जाय । सारे भारत को एक राष्ट्र समझने की बजाय हमें अपने प्रयत्नों को केवल अपने- अपने 'राष्ट्र' तक सीमित रखना चाहिए । ब्राह्मणवाद का निर्मूलन करने के लिए एक सांस्कृतिक -- क्रान्ति इस समय की सब से बड़ी आवश्यकता है । इस पुस्तिका की सफलता का पता इस से चलता है कि इसकी सारी प्रतियाँ दो ही वर्षों में बिक चुकी हैं, जिससे यह सिद्ध होता है कि भारत का एक विशाल वर्ग हमारे दृष्टिकोण को स्वीकार करने लगा है ।

ब्राह्मणवाद के विरुद्ध किये जाने वाले इस युद्ध को दूसरे समस्त विषयों पर महत्व दिया जाना चाहिए । इस मूल-शत्रु का नाश किये बिना हम दूसरी कम खतनाक बुराइयों से लडने का विचार भी नहीं कर सकते । हमारे भारतीय मार्क्सवादी काम्रेड, कृपया इसे नोट कर लें ।

अतः इस पुस्तक के अध्ययन के बाद ब्राह्मणवाद को मिटा देने की तीव्र आवश्यकता के दृढतापूर्वक मानने वालों को हम आवाज़ देते हैं कि वे केवल पुस्तक को पढकर चुप न हो जाएँ, बल्कि आगे बढकर कार्यरत हो जाएँ । विचार से क्रिया की प्रेरणा होनी चाहिए । आपकी सहायता और आपके समर्थन के लिए हम सदा तैयार हैं ।

वी.टी. राजशेखर

दलित साहित्य अकाडेमी
109, 7वाँ क्रास (मोड)
पैलेस लोयर आरचर्ड्स
बेंगलूर - 560 003.
15.9.1984

प्रस्तावना

यह विशेष लेख भारत के एक अत्यन्त ही नाजुक समय में लिखा जा रहा है । वस्तुतः ऐसा कोई साल नहीं गुज़रता जिसे हमारे नेतागण संकटमय न बताते हों । इसका अर्थ यही हुआ कि हमारा देश हर गुज़रते साल के साथ एक दुस्थिति से होता हुआ दूसरी उससे भी अधिक दुस्थिति की ओर फिसलता चला जा रहा है । ऐसी बात नहीं कि हम में निपुणता की कमी है । देश के सारे "बुद्धिमान" एवं निपुण लोग इस परिस्थिति की गम्भीरता के विषय में भली-भाँति जानते हैं ।

इन्हीं 'बुद्धिमान' व 'निपुण' लोगो द्वारा भारत की इस बरबादी की ओर गिरावट के सम्बन्ध में 'चिन्ता' व्यक्त की जाती है । इतना होने पर भी न जाने क्यों कोई भी इस बीमारी के कारणों को ढूँढकर उसका इलाज नहीं करता ! इसी बात से तो हम और बाहर की सारी दुनिया चिन्तित है । हमारे 'बुद्धिमान' और 'निपुण' लोग बीमारी को जानते हुए भी उसका इलाज नहीं करना चाहते ! क्या इस से घोर विश्वासघात कोई और हो सकता है ? क्या हम इनसे बडे बेईमान 'बुद्धिमान' व 'निपुण' समूह को कहीं और देख सकते है ?

इस हृदयहीन टोली का पर्दाफाश करना ही इस विशेष लेख का उद्देश्य है – यह टोली हमारी समस्त जनसंख्या की केवल 10% है जो इस देश पर नियंत्रण रखती है । हम किसी के विरुद्ध कोई द्वेष, कोई अहित-भाव या घृणा नहीं रखते । हम भारत को प्यार करते हैं और चाहते हैं कि यहाँ एक क्रान्ति हो । अतः लेखक होने के नाते यह हमारा कर्यव्य हो जाता है कि क्रान्ति की राह में आने वाली रुकावटों की ओर संकेत करें । इस के लिए हमें सच बोलना होगा; और यह सच्चाई क्या है ? सच्चाई यह है कि ब्राह्मणवाद भारत के लिए विष है, घातक है । यदि भारत को जिन्दा रहना है तो ब्राह्मणवाद को मरना है । संसार की इस अत्यन्त भयानक विचारधारा का व्यवहार न केवल ब्राह्मण करते हैं, बल्कि ब्राह्मणेतरों की एक बहुत बड़ी संख्या भी इसका अनुकरण करती है ।

यही सच्चाई है, और यदि सच्चाई किसी को खटकती है तो हम कुछ नहीं कर सकते। अतः, हमें पूरा विश्वास है कि इस सच को स्थापित (उजागर) करने के हमारे हार्दिक प्रयत्नों की हर एक भारत-प्रेमी (सराहना) प्रशंसा करेगा ।

अति प्रबल मांग और फरमाइश के कारण हमें अपना यह भाषण 'ब्राह्मण प्रभुत्व विरोधी सम्मेलन' के उद्घाटन के समय तैयार करना पडा जिसका आयोजन द्राविडा कळगम ने नवम्बर 1980 को कोयमबत्तूर में किया था । द्राविडा कळगम के प्रधान श्री के. वीरमणि ने मुझे ऐसे दो विराट सम्मेलनों का उद्घाटन करने का गौरव प्रदान किया । ऐसा पहला सम्मेलन तिरुनेलवेली में आयोजित किया गया था ।

दक्षिण भारत से प्रकाशित होने वाले देश के प्रमुख अंग्रेजी पत्रों के मुख-पृष्ठों पर छपे संवादों से पता चलता है कि ऐसे सम्मेलनों का इच्छित प्रभाव पडा है । 'इण्डियन एक्स्प्रेस'

के 31 दिसम्बर, 1980 के अंक में उसके संवाददाता के. श्रीराम इसका हवाला देने के लिए लिखता है कि, 'संगठित ब्राह्मण शक्ति का पहला चिन्ह 21 दिसम्बर 1980 को देखा जा सकता था जब हज़ारों ब्राह्मण मद्रास के मामबलम (जहाँ इस जाति का प्रबल शासन है) से 'राज-भवन' को जलूस में गये थे । उसके बाद संवाददाता का यह कहना ठीक ही है कि उस जलूस का श्रेय के. वीरमणि को जाता है । उन्हीं की 'ब्राह्मणों कि चरित्र-वध' क्रिया से क्रोधित ब्राह्मणों को ऐसा जलूस निकालने की प्रचोदना मिली ।

इस प्रकार 'इण्डियन एक्स्प्रेस' ने निष्कपटता के साथ स्वीकार कर लिया कि द्राविड कळगम द्वारा आयोजित सम्मेलनों की इस श्रृंखला से काफ़ी प्रभाव पंडा है । कुछ भी हो, श्रीराम ने वीरमणि का हवाला देते हुए इस बात पर जोर दिया है कि 'वे सम्मेलन ब्राह्मण विरोधी न होकर ब्राह्मणवाद या ब्राह्मण-प्रभुत्व के विरुद्ध थे । बार-बार स्पष्टीकरण के बावजूद ब्राह्मणों का एक वर्ग हिंसात्मक रूप से विरोध किये जा रहा है । जो कुछ भी हो, हम इस विरोध का स्वागत करते हैं । विचारों का ऐसा संघर्ष समाज को क्रियाशील रखता है। हिन्दू समाज एक प्रवाहहीन दुर्गन्धमय पानी का गड्ढा है; क्योंकि इस पर न कभी कोई बहस हुई है और न ही कोई विचार-विनिमय की सम्भावना रही है । कमज़कम तमिलनाडू में ब्राह्मणों के एक वर्ग ने गलियों में निकलकर नारेबाजी द्वारा यह सिद्ध कर दिया कि उस प्रवाहहीन गड्ढे के मथने मे द्राविडा कळगम सफल रहा है । इस विशेष लेख का आशय इस मथने की क्रिया को तीव्रतम करना है ।

हम 'इण्डियन एक्स्प्रेस' के आभारी हैं कि उसने न केवल ब्राह्मणों के निमित्त फ़रियाद की बल्कि 14 जनवरी 1981 के अंक में आर. सम्पत नामक एक ब्राह्मण का एक अनुच्छेद भी छापा । ब्राह्मणों को सम्बोधित करते हुए सम्पत कहते हैं – 'ब्राह्मणों के प्रति लोगों के दिलों में इतना प्रबल भय क्यों है - - - वह ब्राह्मण जिसे अपने अगले भोजन की चिन्ता भी नहीं होती थी (अर्थात् उसे संग्रह से घृणा थी ।) लोभी और विनाशकारी वस्तु बन गया है । निःस्वार्थ के शिखर से स्वार्थपरता की अथाह गहराइयों में गिरकर वे स्वाभाविक रूप से दूसरी जातियों से दूर होते गये, अपने स्वत्व को अलग करते गये - - - - एक सच्चे ब्राह्मण पर शासन करने वाली धर्मसंहिता से वे विमुख हो गये और अबोध व भोले-भाले लोगों का शोषण करने लगे ।'

इतनी सच्ची बात बताने पर हम आर. सम्पत को धन्यवाद देते हैं ।

यह पुस्तक, संयोग से दलित साहित्य अकाडेमी का प्रथम प्रकाशन है जिसकी स्थापना डा. मुल्कराज आनन्द जी को मुख्य संरक्षक बनाकर 1981 में की गई । हम कर्नाटक दलित संघर्ष समिति को धन्यवाद देते हैं जिसने हमारी पिछली सारी कृतियों को प्रकाशित किया । हम इस समिति के संचालक श्री डी.एम. तिम्मरायप्पा को भी धन्यवाद देते हैं जिन्होंने दलित साहित्य अकाडेमी की स्थापना में भरसक सहायता दी ।

बेंगलूर
17.2.1981

वी. टी. राजशेखर

ब्राह्मणवाद [भारत का अभिशाप]

काम्रेड वीरमणि, महासचिव, द्राविडा कळगम और मित्रो :

यह अपनी प्रकार का दूसरा सम्मेलन है जिसके उद्घाटन के लिए आपने मुझे बुलाया है । ऐसा लगता है कि श्री ई.वी. रामस्वामी जी के तमिलनाडू के अनुयायी मुझसे प्रेम करने लगे हैं । आपके प्रान्त से मुझे असंख्य निमन्त्रण आने लगे हैं । तमिलनाडू भारत का सब से अधिक मर्दाना (पौरुषेय) प्रान्त है । द्राविड समुदाय कभी इस प्रांन्त का शासक था । उन दिनों तमिल भाषा ही राष्ट्रभाषा थी । आपका तिरुनेलवेली सम्मेलन बहुत ही शानदार था । द्राविडा कळगम के अनुशासन और उसकी संचालन एवं व्यवस्था-सम्बन्धी क्षमता से मैं बहुत प्रभावित हुआ था । तिरुनेलवेली के जलूस में सैकडों स्त्रियाँ अनुशासित सैनिकों की तरह शामिल रहीं । उतनी बड़ी संख्या में स्त्रियों का उपस्थित रहना एक ऐतिहासिक महत्व रखता है । तिरुनेलवेली के हर एक मन्दिर और ब्राह्मण-मुहल्ले को पुलिस की रक्षा दी गई थी । कोयमबत्तूर के जलूस में चलते समय मैं ने ऐसे ही दृश्य वहाँ भी देखे थे । उस हद तक ब्राह्मण डरे हुए थे । मैं ने अखबारों में पढा था कि कई ब्राह्मण संस्थाओं ने सरकार से आग्रहपूर्वक मांग की थी कि उस सम्मेलन तथा जलूस पर प्रतिबन्ध लगाया जाय । कैसी मूर्खता की बात है ! किसी भी चीज़ पर प्रतिबन्ध क्यों लगाया जाय ? हर एक को अपना दृष्टिकोण व्यक्त करने का समान अवसर मिलना चाहिए । इसका निर्णय लोगों पर छोड देना चाहिए कि कौन ठीक है और कौन गलत । केवल कायर ही विरोध से डरते हैं ।

देवताओं, धर्म और ब्राह्मणवाद द्वारा उत्पन्न विनाश का बहिष्कार करके स्त्रियों का इतनी भारी संख्या में जलूस में सम्मिलित होना एक अत्यन्त ही मस्त कर देने वाला दृश्य है । माओ ने कहा था कि किसी भी क्रन्तिकारी आन्दोलन में केवल स्त्रियों के सेनामुख बनने से ही सफलता प्राप्त हो सकती है । भारत में हर आन्दोलन की असफलता का कारण यही है कि यहाँ स्त्रियाँ क्रान्तिकारी हेतुओं में सक्रिय भाग नहीं लेती । पुरुषों ने उन्हें दबाकर रक्खा है । क्योंकि धर्म उन्हें इसी का आदेश देता है । द्राविडा कलगम को बधाई देनी चाहिए, क्योंकि उसने स्त्रियों को जलूस का नेतृत्व करने की प्रेरणा दी है ।

भारत में क्रन्तियों का नेतृत्व करना तमिलनाडू की परम्परा रही है । पेरियार ई.वी. रामस्वामी इस आन्दोलन के जन्मदाता थे । हम, कर्नाटक वालों और भारत के अन्य लोगों को आप तमिल लोगों से सीख लेनी चाहिए । हम आप लोगों के नेतृत्व का आदर करते हुए उसकी प्रतीक्षा करते हैं ।

केवल ब्राह्मणों ही पर आक्रमण क्यों ?

यह प्रश्न हमसे जब-तब पूछा जाता रहा है और शायद आपको भी इस प्रश्न का सामना करना पड़ा होगा । हम यह स्पष्ट कर देना चाहते हैं कि हमें ब्राह्मणों से कोई व्यक्तिगत विरोध नहीं है । इसके साथ-साथ हम यह भी स्पष्ट कर देना चाहते हैं कि हम

किसी जाति विशेष से धर्मयुद्ध नहीं लड़ रहे हैं — हमारा युद्ध तो ब्राह्मणवाद से है जो ब्राह्मणों से भी अधिक खतरनाक है । धर्म-पुस्तकों के रचैता एवं ठेकेदार होने के नाते ब्राह्मण ही तो ब्राह्मणवाद के स्थापक थे । इसीलिए व्यक्तिगत ब्राह्मण हमारे शत्रु नहीं हैं। यदि कोई ब्राह्मण-विशेष को हमारी आलोचना से ठेस पहुँचती हो तो हम उसके अज्ञान पर केवल अफ़सोस ही कर सकते हैं । ब्राह्मणवाद ने स्वयं अपनी ब्राह्मण-जाति की एक बडी संख्या की कोई सहायता नहीं की है । कुछ जबानी जमा-खर्च वाले ब्राह्मण यह बडे चाव से कहते फिरते हैं कि ब्राह्मणों की एक बडी संख्या ग़रीब हैं और वे बावर्ची, पुजारी, अध्यापक और न जाने क्या-क्या बने मर रहे हैं । दूसरे वर्गों को तुरन्त सम्पन्न व समृद्ध बनने के लिए जिन वेदों, उपनिषदों, गीता और अन्य प्रयासपूर्ण शास्त्रोक्त विधियों का आदेश देते हैं, ये चीजें स्वयं इनके सृष्टि करने वाले ब्राह्मणों की कोई सहायता नहीं कर सके हैं । हमें इन अज्ञानी ब्राह्मणों पर दया आती है कि वे स्वयं अपने ब्राह्मणवाद का शिकार बन गये हैं । दूसरों को अपने जाल में फँसाने से पहले यह ब्राह्मण खुद को तो बचा लें । हम यह मानते हैं कि दूसरों की तरह ब्राह्मण भी भारत का एक अंग हैं । अतः हम जो ब्राह्मणवाद से लड रहे हैं, इन 'गरीब' ब्राह्मणों को भी ब्राह्मणवाद की पकड से बचाने में दिलचस्पी रखते हैं । यदि वे बुद्धिमान हैं तो उनको हमारी चेतावनी पर ध्यान देना चाहिए । वरना उन्हें जनता के क्रोध का सामना करने के लिए तैयार रहना पड़ेगा ।

विभिन्न स्थानों पर लोग हम से पूछते रहे हैं कि हम केवल ब्राह्मणों ही पर आक्रमण क्यों करते हैं और दूसरे वर्गों तथा जातियों के शोषकों पर क्यों नहीं ? केवल उन्हीं से घृणा क्यों की जाती है ? कश्मीर से कन्याकुमारी तक केवल ब्राह्मणों ही को क्यो नशाना बनाया जाता है ? अधिक से अधिक फिल्मों, उपन्यासों, कविताओं, पुस्तकों और लेखों में केवल ब्राह्मणों ही को दुष्ट, रक्त पिपासु व जोंक के रूप में क्यों चित्रित किया जा रहा है ?

इस एक विषय पर सारा देश एकमत क्यों है ? क्यों ? क्या ये सब पागल हो गये हैं जो केवल ब्राह्मणों ही पर हमला किये जा रहे हैं ? उन में क्या दोष हैं । ब्राह्मणों के विरुद्ध ऐसी संयुक्त आवाज़ें क्यों ?

इन सब प्रश्नों का एक ही उत्तर है और वह है - शोषण का दूसरा नाम ही ब्राह्मणवाद है । हम किसी से भी और किसी भी रूप में किये गये शोषण का विरोध करते हैं । जब हम ब्राह्मणवाद पर हमला कतरते हैं तो वास्तव में हम शोषण पर वार करते हैं । केवल ब्राह्मण पर ही नहीं । इस बात को स्पष्ट रूप से समझ लेना चाहिए । इसीलिए भारत में जैन-धर्म और बौद्ध-धर्म से लेकर आज के दिन तक सामाजिक न्याय के लिए चलाया गया हर आन्दोलन ब्राह्मणवाद विरोधी ही रहा है । ब्राह्मण और ब्राह्मणवाद के विरुद्ध धर्मयुद्ध चलाने वाले केवल पेरियार और हम ही नहीं हैं । जैसे कि जगजीवनराम जी ने कहा था – "सामाजिक समानता के लिए चलाया जाने वाला हर आन्दोलन (मूल रूप से) ब्राह्मण-विरोधी तथ्य वाला होना चाहिए ।" गौतम बुद्ध जी का ब्राह्मण-विरोधी आन्दोलन सब से महान और अत्यन्त प्रसिद्ध आन्दोलन था जिसने ब्राह्मणवाद को इस देश में निर्मूल

कर दिया था । इसी तरह भारत का हर एक सामाजिक, सांस्कृतिक अथवा धार्मिक आन्दोलन भी मूल रूप से ब्राह्मण-विरोधी ही था । वे ब्राह्मण जो हमारे ब्राह्मण-विरोध की आलोचना करते हैं, हमें भारत में होने वाला कोई एक भी आन्दोलन दिखा दें जो मूल रूप से ब्राह्मण-विरोधी नहीं था । बसवण्णा जी का (वीरशैव आन्दोलन) महात्मा फुले, श्री नारायण गुरू, अम्बेडकर, ई.वी. रामस्वामी, लोहिया, दलित पूयान्थर या कोई भी हो, मूल रूप से वे सब ब्राह्मण-विरोधी ही थे ।

. विवेकानन्द और गाँधी तक जिन पर ब्राह्मण-विरोधी धर्मयुद्ध के नेतृत्व का आरोप नहीं लगाया जा सकता, ब्राह्मणों के बारे में कोई अच्छी राय नही रखते थे । विवेकानन्द कहते हैं – 'वे (ब्राह्मण) अपने स्वार्थ के लिए सत्ता और विशेष अधिकारों पर अन्याय से कब्ज़ा करने लगे । यदि एक ब्राह्मण ने किसी व्यक्ति की हत्या कर दी तो उसे कोई भी दण्ड नहीं दिया जाएगा । ब्राह्मण जन्म से ही इस विश्व का देवता है ! नीच से नीच ब्राह्मण की भी पूजा की जानी चाहिए ! (कास्ट, कलचर एण्ड सोशियालिज़म स्वामी विवेकान्नद – अद्वैताश्रम, नं. 5, देही यन्ताल्ली रोड, कलकत्ता -14) । इस पुस्तक में विवेकान्नद कहते हैं कि –'पुरोहिती-छल भारत का अभिशाप है ।' और लोगों से कहते हैं कि – 'इन पुरोहितों को मार भगाओं जो हमेशा प्रगति के विरोधी हैं । अपने व्यवहार में ये कभी सुधार नहीं लाएँगे' (उपरोक्त पुस्तक, पृष्ठ 40-41)। इन गरीब लोगों की उन्नति के लिए बिना कुछ किये, दस करोड ब्राह्मण इनका खून चूसते रहे हैं - यह कोई देश है या नरक ? यह कोई धर्म है या पैशाचिक नृत्य ?" (उपरोक्त पुस्तक - पृष्ठ 41) क्या हम ब्राह्मणों पर किये जाने वाले इससे अधिक विनाशकारी आक्रमण को कहीं और देख सकते हैं? आक्रमण करने वाला कोई और नहीं, देश की सबसे महत्वपूर्ण ब्राह्मण संस्था आर.एस.एस. का महान पुरोहित विवेकानन्द ! गाँधी, जिन्हों ने ब्राह्मणों की सेवा के लिए जीवन-भर सब कुछ किया और इस सेवा के बदले में 'महात्मा' की उपाधी पाई जिन्दगी भर विभिन्न रीतियों से ब्राह्मणों की सेवा करके 'महात्मा' की उपाधी पाने वाले गाँधी ने भी ब्राह्मणों को नहीं बख्शा --- 'ब्राह्मणों ने स्वयं हमें यह विश्वास करना सिखाया था कि वे ही दैवी बुद्धि के रखवाले हैं और यह कि जहाँ यह दैवी बुद्धि होती है वहाँ भय नहीं होता, कुचल देने वाली दरिद्रता नहीं होती, ऊँचा या नीचा स्तर नहीं होता, लोभ, ईर्ष्या, युद्ध, लूटमार जैसी बातें नहीं होतीं । चूँकि ब्राह्मणवाद में खुद गिरावट आ गई इसलिए वह हिन्दुओं के सारे वर्गों को भी अपने साथ नीचे खींच कर ले गया ।' गाँधी एक और जगह कहते हैं – 'यह कितने अफ़सोस की बात है कि आधुनिक ब्राह्मण न केवल अपने मूल-भूत कर्तव्यों पर ध्यान नहीं देता और धर्म की सेवा नहीं करता, बल्कि खुद के धनोपार्जन के लिए सब प्रकार के व्यवसायों में लगा हुआ है' (माइ वर्णाश्रमा धर्मा, पृष्ठ - 89 एवं 100, भारतीय विद्या भवन, बम्बई - 7, 1965)।

गाँधी ने ठीक ही कहा । वर्णाश्रम धर्म के अनुसार, ब्राह्मणों को "आरक्षण" केवल "ज्ञान-सम्बन्धी व्यवसायों" में ही था । लेकिन आज वे उन सभी व्यवसायों को छीने ले रहे हैं जिनकों स्वयं उन्होंने शूद्रों और अतिशूद्रों के लिए आरक्षित किया था ।

जीवनभर ब्राह्मणों की निष्कपट एवं श्रद्धापूर्ण सेवा करने के बावजूद, खुद एक ब्राह्मण ने गाँधी को गोलियों से भून डाला ।

जाति ने भारत को नष्ट कर डाला :-

हिन्दूवाद जिसका वास्तविक नाम ब्राह्मणवाद है, जाति-प्रथा के अलावा और कुछ नहीं है । बिना जाति के हिन्दूवाद मृतक समान है । 'जिस दिन भारत से यह जाति - पद्धति लुप्त होजाएगी, हिन्दूवाद भी अदृश्य हो जाएगा ।' (एम.एन. श्रीनिवास - ए नोट ऑन सांस्कृतैज़ेशन एण्ड वेस्टरनैज़ेशन -- फार ईस्टर्न क्वार्टरर्ली - 1956 - वाल्यूम - 15 पृष्ठ 495) यह उस व्यक्ति की राय है जिसे भारत का उच्चतम समाजवाद - का वैज्ञानिक समझा जाता है और वह खुद एक ब्राह्मण है । जाति-प्रथा (वर्णाश्रम धर्म) ही ब्राह्मणवाद का दूसरा नाम है और कई बड़े-बड़े विचारकों एवं सुधारकों ने इसका खण्डन किया है । चूँकि हमारे पास ब्राह्मणेतरों की राय बताने के लिए समय नहीं है, इस लिए केवल कुछ प्रसिद्ध ब्राह्मणों द्वारा व्यक्त की गई राय तक ही अपनी बात सीमित रक्खूँगा ।

रवीन्द्रनाथ टेगूर : "भारत की जिन बातों के बारे में हमें सोचना पडेगा वे हैं - - - उन सामाजिक प्रथाओं एवं आदर्शों को निकालना है जिन से आत्म-सम्मान की चाह की उत्पत्ति हुई है और हम से उच्च वर्ग पर हमारा पूर्ण अवलम्बन हो गया है । भारत के जातिप्रथा के प्रभुत्व ने ही आज हमारे सारे व्यवहारों को इस स्थिति को पहुँचाया है । इसके अलावा परम्पराओं की सत्ता पर अवलम्बन करने की हमारी अंधी एवं आलसी आदत ने हमें उन प्रथाओं का गुलाम बना दिया है जो आज के युग के लिए असंगत और काल-गणना के भ्रम से पूर्ण हैं ।

जवाहर लाल नेहरू :- आज के समाज के संदर्भ में जाति-पद्धति और इसके साथ होने वाली अन्य कई बातें प्रगति के लिए पूर्ण रूप से बेमेल, प्रतिकारवादी, रुकावटी और बाधक है । इस जाति-प्रथा के कारण न तो सामाजिक परिस्थितियों और अवसरों में समानता हो सकती है और न ही राजनैतिक जनतन्त्र हो सकता है; जबकि आर्थिक जनतन्त्र तो बहुत दूर की बात है । इन दो धारणाओं के बीच संघर्ष स्वाभविक बात है, क्योंकि इन दो में से एक ही जीवित रह सकती है । ('डिस्कवरी ऑफ इण्डिया, परिच्छेद VI, पृष्ठ - 234).

गोखले :- "वर्धमान एक ऐसे मीनार (Pyramidical) जैसे समाज का समर्थन करता है जिसकी हर परत (Layer) निश्चित और निश्चल होती है । यह कठोरता किसी भी सामाजिक क्रान्ति को असम्भव बना देती है ।"

सामाजिक असमानत और जाति-भक्ति किसी भी धर्मनिर्पेक्ष समाज में परस्पर विरोधी होती है । इसी लिए यह कोई आश्चर्य की बात नहीं है कि भारत में ब्राह्मणवाद के विरुद्ध लगातार धर्मयुद्ध चलता रहा है । और भारत में ऐसा कोई आन्दोलन नहीं हुआ है जो मूलरूप से ब्राह्मणविरोधी न रहा हो, चाहे वह सामाजिक, सांस्कृतिक या धार्मिक आन्दोलन ही

क्यों न रहा हो । इस बात को किसी और ने नहीं स्वयं एन. राम जो 'हिन्दू' दैनिक-पत्र के सम्पादक हैं, ने रेखांकित किया है । "आधुनिक उपनिवेश समाज में यह कदपि आश्चर्य की बात न होगी यदि जाति-प्रभुत्व के विरुद्ध किया जाने वाला कोई भी सामाजिक समानता का आन्दोलन पूर्वीय स्थिति से ब्राह्मण-विरोधी हो । (ई.पी. डब्ल्यू - पृष्ठ - 379, वार्षिक संख्या - 1979)

मित्रो, याद रखिए, जो लोग समानता, सामाजिक न्याय, निजि जायदाद का नाश, स्त्रियों की मुक्ति आदि अधिकारों के लिए संग्राम करते हैं, उनका ब्राह्मण-विरोधी होना आवश्यक है । कोई भी व्यक्ति एक ही समय ब्राह्मणों का समर्थक और निजि जायदाद का नाश करने वाला समाजवाद का उपासक नहीं हो सकता । यदि किसी ने कभी इस धोखाबाजी का व्यवहार किया (जैसे मार्क्सवादी करते हैं) तो वह हिन्दू भारत का सब से बडा प्रतिकूलतापूर्ण काण्ड होगा । बिना ब्राह्मणवाद के नाश के भारत में समाजवाद आ ही नहीं सकता । अधिक विवरण के लिए आर.एस. एस वालों का धर्म-ग्रन्थ "बंच ऑफ थाट्स' पढिए जिसके लेखक गुरु गौलवालकर हैं, (पृष्ठ - 53)।

ब्राह्मण हर उस आन्दोलन का विरोध करते हैं जो जायदाद पर प्रतिबन्ध लगाने के लिए होता है । 'मनुष्य की मानसिक एवं नैतिक स्वतन्त्रता पर जायदाद एक प्रबल परिमिति होती है और यही स्वतन्त्रता किसी भी मनुष्य के विचारों व कर्मों पर प्रभाव डालती है । यह जायदाद या सम्पत्ति दो तत्वों में संघर्ष उत्पन्न करती है । यही कारण है कि ब्राह्मण परिवर्तन का विरोध करते हैं । ऐसा इसलिए कि परिवर्तन से उनकी सत्ता और सम्पत्ति की हानि होती है । (डा. अम्बेडकर, "द बुद्धा एण्ड हिस धम्मा" - पृष्ठ 317 - सिद्धार्थ प्रकाशन - 1974).

ब्राह्मण एक क्रान्तिकारी नहीं हो सकता :-

इन्हीं कारणों से ब्राह्मण एक सच्चा और शुद्ध क्रान्तिकारी नहीं हो सकता, क्यों कि वह अपनी जाति का एक अटूट हिस्सा है और अपने अधिकारों की वर्तमान स्थिति को बनाये रखना चाहता है । अतः यदि वह एक वैज्ञानिक भी हो तो अपनी जाति के पिंजरे से शायद ही बाहर निकल सके । ऐसे सैंकडों पाश्चात्य-प्रशिक्षित वैज्ञानिक होंगे । जैसे कि अम्बेडकर ने कहा है ब्राह्मणों में चाहे कितनी ही संख्या में शिक्षित लोग रहे हों, लेकिन शायद ही वे कोई बौद्धिक प्रवीण पैदा कर सके हों । उस जाति के लिए क्या यह लज्जा की बात नहीं है?

"ब्राह्मण राजनीतिक और कुछ अवसरों पर आर्थिक सुधार के आन्दोलन का सेनामुख बनते हैं । लेकिन जब जाति की सीमाओं को तोडने के लिए जनसेना बनाई जाती है तो यही ब्राह्मण उसमें साधारण अनुयायी भी नही बनते । क्या भविष्य में भी ऐसे कार्यों में ब्राह्मणों के हिस्सा लेने की कोई सम्भावना हो सकती है ? मैं कहता हूँ, नहीं । शायद आप पूछें, क्यों ? आप बहस कर सकते हैं कि सामाजिक सुधार से ब्राह्मणों के दूर रहने का कोई कारण नहीं है । आप यह भी बहस कर सकते हैं कि ब्राह्मण इस बात को अच्छी तरह जानते हैं कि जाति प्रथा हिन्दू समाज के लिए अभिशाप है । ऐसे में ज्ञानप्राप्त वर्ग होने के कारण वे

उसके परिणामों से उदासीन नहीं रह सकते । आप यह भी तर्क कर सकते हैं कि ब्राह्मणों में धर्मनिर्पेक्ष भी हैं और पुरोहित-शाही के चाहने वाले भी । जाति प्रथा को तोडने में पुरोहित-प्रिय ब्राह्मण डण्डा न उठाये तो भी कमज़कम धर्मनिर्पेक्ष ब्राह्मण अवश्य बलप्रयोग करेंगे । यह सब सुनने में तो सुखद सत्य लगता है । लेकिन इन सब बातों में यह भुला दिया जा रहा है कि जाति-प्रथा को तोडने से उल्टा ब्राह्मण-जाति को ही नुकसान उठाना पडता है । इस बात पर ध्यान देते हुए क्या इस बात की आशा करना उचित है कि ब्राह्मण ऐसे किसी आन्दोलन का नेतृत्व करना स्वीकार करेंगे जिसका अन्तिम परिणाम ब्राह्मणों की सत्ता और प्रतिष्ठा का नाश है ? क्या धर्मनिर्पेक्ष ब्राह्मणों के ऐसे किसी आन्दोलन में हिस्सा लेने की आशा करना उचित है जिसका निशाना पुरोहित-शाही ब्राह्मण हों ? मेरा निर्णय यह है कि धर्मनिर्षेक्ष और पुरोहित-शाही ब्राह्मणों के बीच अन्तर करना ही व्यर्थ है । दोनों एक दूसरे के सगे-सम्बन्धी हैं । वे एक ही शरीर के दो हाथ हैं । एक हाथ का दूसरे हाथ के अस्तित्व के लिए लडना बिल्कुल ही स्वाभाविक बात है । " (डा. अम्बेडकर : 'अनिहिलेशन ऑफ़ कास्ट', पृष्ठ 87-88, भीम पत्रिका प्रकाशन, इप्रील 1975)।

इस सच्चाई को जानने के लिए कि ब्राह्मण अपनी वर्तमान स्थिति को बनाये रखने पर अडिग हैं, हमें न किसी 'धर्मग्रन्थ' को पढने की आवश्यकता है और न ही किसी प्रकाण्ड विव्दान से राय-मश्वरा करने की । भारत में बैंकों के राष्ट्रीकरण करने जैसे समाजवादी कार्य का विरोध सबसे पहले ब्राह्मणो की सबसे बडी, सम्पन्न और प्रसिद्ध संस्थाएँ आर.एस.एस. और जनसंघ (भारतीय जनता पक्ष) ने किया था । किसी शंकराचारी ने भी भू-सुधार या शहरी-जायदाद के राष्ट्रीकरण का समर्थन नहीं किया । इसके विपरीत ब्राह्मणों का चरण-चाटू सत्य साई बाबा और चिन्मयानन्द, रजनीश आदि जैसे ढोंगी देवपुरुष तो निजि सम्पत्ति में अखण्ड विश्वास रखते हैं । आज के दिन तक हम बडी कठिनाई से ही ऐसा कोई ब्राह्मण देख पाएँगे जो डॉ. अम्बेडकर या पेरियार के स्तर का हो जिन्होंने ने निजि जायदाद के विरुद्ध आन्दोलन चलाया था ।

इसीलिए सब ब्राह्मण सम्पत्ति से इतनी आत्मीयता रखते हैं । सरस्वति मेनन ई.पी. डब्ल्यू के 1979 के वार्षिक अंक में कहते हैं -- "सारे भारत में जमीन्दारी सामन्यतः कुछ उच्च जातियों तक ही सीमित रह गई है । तंजाऊर में मीरासी - पद्धति को अनियमित ढंग से ब्राह्मणों के भू-स्वामीत्व के साथ जोड दिया गया है । इनकी संख्या इस ज़िले की जनसंख्या का केवल 6% है और 25% से भी अधिक कृषक-पट्टे इनके नाम में हैं । (पृष्ठ -403)

दूसरी ओर पेरियार, अम्बेडकर, लोहिया, फुले, नारायणगुरु आदि जैसे ब्राह्मण-विरोधी लोगों ने अपना सारा जीवन निजि जायदाद को नष्ट करने पर अर्पित कर दिया । वे ही लोग सच्चे और पक्के मार्क्सवादी थे । डांगे, नम्बूद्रीपद या पी. राममूर्ति जैसे लोग नहीं ।

इतना ही नहीं ब्राह्मण लोग स्त्रियों को समान अधिकार देने के विरोधी भी हैं । समाजवादी ब्राह्मण जवाहरलाल नेहरू ने तक अम्बेडकर द्वारा स्त्रियों को समान अधिकार देने के लिए बनाई गई संहिता विधेयक (Code Bill) का विरोध किया था जिसके कारण अम्बेडकर ने कानून मंत्री के पद से त्यागपत्र दे दिया था ।

नेहरू का समाजवाद : नेहरू जो खुद को समाजवादी के रूप में वर्णित करते थे, अपने ब्राह्मणवाद से बाहर निकल ही नहीं सके । चीन का आक्रमण हुए कुछ सप्ताह भी नहीं हुए थे कि नेहरू को ज्योतिषियों की बातों को सुनने का शौक हुआ । परन्तु ज्योतिषी की बातों से उनको थोडी भी तसल्ली नहीं मिली । उन्हों ने घोषित किया था कि नेहरू की जीवन-लीला समाप्त हुई । केवल पूजा (यज्ञ आदि) ही उन के जीवन को दीर्घ बना सकते है। उसके बाद जो कुछ हुआ वह सब रहस्य के परदे में छुपा रहा । उनके चाहने वालों ने पचास प्रकाण्ड पण्डितों को निश्चित किया (किराये पर लिया) ताकि वे शहर से बाहर कालकाजी के मन्दिर में संस्कारो के अनुसार यज्ञ आदि कर सकें । प्रतिदिन धार्मिक रीतियों के अन्त में ब्राह्मण पण्डित उनके माथे पर मंगल तिलक लगाते । दुर्गा दास इस बात का भी वर्णन करते हैं कि किस प्रकार एक उच्च अधिकारी ने इस रहस्य को प्रकट किया था जिससे सिन्हा जी (सत्यनारायण सिन्हा जो कई वर्षों तक संसदीय व्यवहारों के सचिव थे) की यह कहानी बज़नदार बन जाती है कि नेहरू धीरे-धीरे सनकी विश्वासों की ओर बहते जा रहे थे। भविष्यवक्ता में विश्वास रखना पूर्व देशीय लोगों का एक अजीब गुण है । नेहरू जो खुद को मूर्तिभंजक कहते थे, अन्त में उसी का शिकार हो गये ।

अतः ब्राह्मणवाद का विरोध करने वाले अपने वचनों और कर्मों से अधिक उत्सर्गी एवं निष्कपट होते हैं । दूसरी ओर ब्राह्मण और उनकी संस्थाएँ व्यक्ति-व्यक्ति के बीच असमानता एवं निजि सम्पत्ति के प्रबल समर्थक हैं । वर्गों के शोषण का तत्वज्ञान ही वेदान्त है । यह बात उन लोगों को देखने से प्रमाणित हो जाती है जो चिन्मयानन्द के उपदेशों को सुनने के लिए जाते हैं ।

इस लिए यह वैज्ञानिक रूप से सिद्ध किया जा सकता है कि ब्राह्मणवाद के नाश के बिना निजि सम्पत्ति का नाश हो ही नहीं सकता । ब्राह्मणवाद और निजि सम्पत्ति एक ही सिक्के के दो मुख हैं ।

भारत के सारे जायदाद-मालिकों को देखिए जिनका वर्णन हम बडे उद्योगपतियों के नाम से करते हैं जैसे -- टाटा, बिडला, मफ़तलाल, साहू जैन, बंगूर, किर्लास्कर, गोयंका, सिंधानिया आदि । ये सब के सब ब्राह्मणवाद के प्रबल समर्थक हैं । ये लोग ब्राह्मणवाद के स्तम्भ हैं । ये ही लोग नित नये मन्दिर बनवाते हैं (जैसे, बिडला मन्दिर), पुराने मन्दिरों की मरम्मत करवाते हैं और शास्त्र सम्बन्धी यज्ञों पर अपरिमित रूप से खर्च करते हैं । यही लोग पत्र-पत्रिकाओं के स्वामी होते है और ब्राह्मण एवं अन्य ऊँची जातियों के पत्रकर्त्ताओं को इन्हें चलाने के लिए नियुक्त करते हैं । एक वर्ग दूसरे का पूरक है । बनियों (सम्पत्ति

वाला वर्ग) को ब्राह्मण चाहिए और ब्राह्मणों को बनिये । एक के बिना दूसरा जिवित रह ही नहीं सकता । इसी वर्ग और जाति के भयानक संसर्ग ने हमारी समस्या को दुगुना जटिल बना दिया है । हमने इस विषय पर अपने अनुच्छेद 'हाउ मार्क्स फेल्ड इन हिन्दू इण्डिया' और 'क्लास–कास्ट स्ट्रगल' में चर्चा की है । इसीलिए मैं इस विषय की गहराई में जाना नहीं चाहता । हमारे मार्क्सवादी सम्पूर्ण रूप से भ्रम में होंगे यदि वे यह समझें कि बिना समकालीन ब्राह्मणवाद का नाश किये वे सम्पन्न (बनिये) जाति को नष्ट कर देंगे । निजि जायदाद से अधिक खतरनाक ब्राह्मणवाद है । यह भारतीय मार्क्सवादियों की शरारत है जिसका हमने बार-बार पर्दाफ़ाश किया है । हम आप से प्रार्थना करते हैं कि इस शरारत से सावधान रहें ।

अछूतों के दुश्मन नम्बर एक : असंख्य अछूत हम से कहते आ रहे हैं कि उन पर हिंसा के कृत्य करने वाले ब्राह्मणों से अधिक नीच जाति के शूद्र होते हैं (मध्यस्थित जाति) । सारे भारत में अन्य पिछडी जातियों के यही लोग अछूतों को लातों से मारते, उनकी हत्या करते, जलाते, बहू-बेटियों की इज़्ज़त लूटते और उनकी सम्पत्ति को नष्ट कर देते हैं । यह सच है कि झगडा हमेशा निकटतम पडोसियों के बीच होता है । अछूत सारे भारत में जाति नामक सीढी में सबसे नीचे हैं और शूद्र उनके बगल में रहने वाले पडोसी हैं । चूँकि जाति - प्रथा का सार ही झगड़ा है, इसलिए यह स्वाभाविक है कि पुरोहित--शासन में ऊपर रहने वाले नीचे वालों को दबायें । लेकिन अन्य पिछडी जातियों को अछूतों को दबाने - कुचलने की प्रेरणा देता कौन है ? इन कृत्यों से अधिक इनके पीछे काम करने वाली प्रेरणा और विचार-धारा बहुत महत्वपूर्ण है । दिमाग मार्गदर्शन कराता है और पाँव लात मारता है । अतः यहाँ - दिमाग कौन है ? वह ब्राह्मण ही तो है ।

इस स्थिति का विश्लेषण डॉ० बी.आर. अम्बेडकर ने सबसे अच्छे ढंग से किया है : "ऐतिहासिक रूप से ब्राह्मण नीच जातियों के पक्के दुश्मन रहे हैं (शूद्र और अछूत जातियाँ)। ये जातियाँ कुल मिलाकर हिन्दू जनसंख्या का 80% बनती हैं ।" (अम्बेडकर - 'व्हाट काँग्रेस एण्ड गाँधी हथाव डन टू अनटचबल्स' - थ्याकर एण्ड कं०. बम्बई, पृष्ठ 293, 1945)

इस का मतलब यह नहीं कि हम पिछडी जातियों द्वारा अछूतों पर होने वाली हिंसा को सह सकते हैं । पिछडी जातियों के अधिकांश लोग भी अछूतों ही की तरह गरीब हैं । सिर्फ़ इसलिए कि वे अछूत नहीं हैं और जाति-प्रथा ने उन्हें इसका दैवी अनुमोदन' दिया हुआ है, वे ऐसे हिंसक कृत्यों में लगे हुए हैं । अब समय आ चुका है कि द्राविडा कलगम उन पिछडी जातियों के नेताओं को चेतावनी दें कि यदि वे अपनी जाति के लोगों को हिंसा के विरुद्ध शिक्षा न दें तो उनको भी ब्राह्मणवाद के हाथों कष्ट उठाने पडेंगे ।

अम्बेडकर कहते हैं कि ब्राह्मणवाद के छः प्रधान तत्व हैं :

(1) विभिन्न वर्गों की दरजों में असमानता

(2) शूद्रों और अछूतों का पूर्ण रूप से निश्शस्त्रीकरण

(3) शूद्रों और अछूतों की शिक्षा पर सम्पूर्ण प्रतिबन्ध

(4) शूद्रों और अछूतों को सत्ता एवं अधिकार पर आने से रोकना

(5) इन के जायदाद बनाने पर प्रतिबन्ध

(6) स्त्रियों का पूर्ण दमन व अवरोध । (उपरोक्त पुस्तक) अतः असमानता, ब्राह्मणवाद का अधिकृत सिद्धान्त है ।

इसलिए ऐसे अछूतों का यह सोचना कि अन्य पिछडी जाति के लोग उनके दुश्मन हैं, एक गलत निर्णय है । एक सच्चा अम्बेडकरवादी अपने दुश्मन नम्बर एक को पहचानना जानता हैं । जब तक भारत में ब्राह्मणवाद जिन्दा रहेगा तब तक अन्य पिछडी जातियों के लोग उन्हें लातें भी मारते रहेंगे और उनकी हत्या भी करते रहेंगे । इसलिए अछूतों के नेताओं को चाहिए कि वे अपने अनुयाइयों को अपने प्रथम शत्रु को पहचानने की सीख दें । केवल इस मुख्य शत्रु का नाश करने के बाद ही छोटे पापियों पर आक्रमण करना सम्भव हो सकेगा । जायदाद वाली जातियों एवं अन्य पिछडी जातियों के पास राजनीतिक सत्ता और शारीरिक बल चाहे हो, किन्तु उनके पास दिमाग शायद ही होगा । एक बार यदि दिमाग का नाश कर दिया गया तो अगले वार में उस पशुता का नाश करना बहुत ही आसान काम है ।

स्त्रियों के विमोचक (मुक्ति दिलाने वाले) :-

सारे संसार में केवल भारत ही एक ऐसा देश है जहाँ ब्राह्मणों ने शिक्षा को अपना एकाधिकार बना लिया है । और नीची जातियों के शिक्षा ग्रहण करने पर कठिन दण्ड भी लागू कर रक्खा है । इस दण्ड में जीभ को काट फेंकना और कानों में पिघला हुआ सीसा उँडेल देना आदि भी शामिल है । अधिक विवरण के लिए मनुस्मृति पढिए ।

आज हम यदि अधिकांश शूद्रों और विशेषकर अछूतों को निर्जीव, हतोत्साह, निराश और पूरी तरह नामर्द पाते हैं तो इसका कारण यह ब्राह्मणी कानून ही है । 'सती' प्रथा के नाम से विधवाओं को ज़िन्दा जला दिया जाता है । यदि राजाराम मोहन राय न होते तो यह क्रूर प्रथा आज भी प्रचलित रहती । विधवाओं को पुनर्विवाह की अनुमति नहीं है । स्त्रियाँ, जिनमें ब्राह्मण-स्त्रियाँ भी शामिल हैं इस ब्राह्मणी कानून के बलिपशु हैं । इसलिए स्त्रियाँ, विशेषकर ब्राह्मण स्त्रियों को चाहिए कि वे ब्राह्मणवाद के नाश को अपने जीवन का प्रथम उद्देश्य समझें । केवल ब्राह्मणवाद को नष्ट करने के बाद ही उनको सच्ची मुक्ति मिल सकती है । स्त्रियों को मुक्ति दिलाने वालियाँ इस बात को याद रख लीजिए ।

यदि नीची जाति, विशेषकर अछूत एक गुलाम है तो उसकी पत्नी गुलाम की गुलाम है । सिवाय ब्राह्मण-विचारधारा के इसके लिए और कौन ज़िम्मेदार हो सकता है ?

क्या ब्राह्मणवाद की विचारधारा में कोई परिवर्तन आया है ? नहीं । हर एक ब्राह्मण, और दूसरी ब्राह्मणेतर जातियों के वे लोग जो ब्राह्मणों के तलुवे चाटते हैं, आज भी इस विचारधारा में दृढ विश्वास रखते हैं । श्रीमति इन्दिरा गाँधी ब्राह्मणवाद की सबसे

बड़ी मुखवाणी हैं । उनके पूर्वाधिकारी मोरारजी देसाई भी ब्राह्मणवाद के प्रचण्ड उपासक थे । मुझे आज तक ऐसा कोई ब्राह्मण नही मिला जिसने ब्राह्मणवद का विरोध किया हो । यहाँ तक कि जवाहर लाल नेहरू भी इससे अलग नहीं थे । मार्क्सवादी पार्टियों के ब्राह्मण भी अपवाद नहीं है । यदि कोई अपवाद थे तो वे एम.एन. रॉय थे । कश्मीरी ब्राह्मण प्रेमनाथ बज़ाज़ भी होंगे जिन्हें लोग बहुत कम जानते हैं ।

बुद्धिमत्ता किसी का एकाधिकार नहीं :

हिन्दू भारत में एक बडे ही मनमौजी या भद्दे सिद्धान्त का प्रतिपादन किया जाता है कि केवल ब्राह्मण ही योग्यता के मालिक होते हैं और इसी कारण वे भारत के सभी महत्वपूर्ण पदों पर विराजमान रहते हैं । हमारे मार्क्सवादी लोग तक इस सिद्धान्त पर विश्वास करते हैं । पश्चिम बंगाल में ज्योति बसु के मार्क्सवादी मंत्रीमण्डल में एक अछूत भी पूर्ण मन्त्री नहीं है । इसके लिए उत्तर यह देते हैं कि अछूतों में एक भी 'योग्य' एम.एल.ए. नहीं है जिसे केबिनेट मन्त्री का पद दिया जा सके । इस उत्तर से यह पता चलता है कि पहले से ही यह मान लिया गया है कि अछूत या अन्य नीच जातियों में योग्यता नहीं होती और केवल ज्योति बसू के मन्त्रीमण्डल में भरे हुए ब्राह्मण ही योग्य और श्रेष्ठ हैं । इसी सिद्धान्त के आधार पर इन्दिरा गाँधी का मन्त्रीमण्डल भी 50% से भी अधिक ब्राह्मणों से भरा हुआ है । यही स्थिति हर एक प्रान्तीय मन्त्रीमण्डल, विभाग (महकमे) या विश्वविद्यालय, बैंक या शिक्षा संस्था में पाई जाती है । जब यह बात ब्राह्मणों और उनकी दुम चाटने वालों के ध्यान में लाई जाती है तो उनका मामूल उत्तर यही होता है कि इन पदों के लिए चुनाव 'योग्यता' के आधार पर होता है और संयोग से ब्राह्मण ही योग्य होते हैं । ठीक है । चलो इस सिद्धान्त को मान लें । जी हाँ ! इसी सिद्धान्त के आधार पर जब से भारत स्वतन्त्र हुआ है तब से ब्राह्मण इस पर शासन कर रहे हैं । जब सर्वश्रेष्ठ तेजस्वी और योग्यतम लोग भारत पर शासन कर रहे हैं तो भारत को धरती का स्वर्ग हो जाना चाहिए था। परन्तु इसकी वास्तविक हालत क्या है ? यह एक भिखारी देश है । संयुक्त राष्ट्र संघ में इसकी श्रेणी 120वीं है ! जानते हैं चीन की श्रेणी क्या है ? यहाँ न ब्राह्मण हैं न देवता । परन्तु चीन प्रथम के बीस देशों में से है । ऐसा कैसे हो गया ? इस ब्राह्मणी योग्यता से क्या लाभ जिसके पास हृदय नहीं है ? बिना हृदय की योग्यता ज़्यादा (बडी) खतरनाक होती है ।

भारत पर किसका शासन है ?

साधारणतया इस प्रश्न का यही उत्तर दिया जाता है कि 'सरकार'; क्या वह राष्ट्रपति है, प्राधानमन्त्री है या केन्द्रीय मन्त्रीमण्डल ? संसद, मुख्यमन्त्रीगण, प्रान्तीय सरकार, पुलिस, न्यायांग, या समाचार पत्र-पत्रिकाएँ ? कोई भी नहीं ।

शासकीय वर्ग की नियुक्ति इन में से कोई भी नहीं करता । भारत में जो शासकीय अंग' आखों को नज़र आता है, वास्तव में वह सत्य नहीं होता । यहाँ राष्ट्रपति, प्राधानमन्त्री

या उपर्युक्त कोई भी कार्यालय या पद शासकीय वर्ग नहीं होता । वे सब शासकीय वर्ग का एक भाग मात्र हैं । तो फिर शासकीय वर्ग की नियुक्ति कौन करता है ? भारत में उसकी उच्च 10% जनसंख्या शासकीय-वर्ग होती है – इस में से 5% ब्राह्मण होते हैं और 5% उनके तलुवे चाटने वाले । अर्थात ब्राह्मणों और बनियों का जागीरदारी वर्ग । 'जाति - वर्ग' का भयानक जन्तु । दूसरे शब्दों में वे लोग जो ब्राह्मणवादी विचार धारा के समर्थक हैं वही भारत के शासकीय वर्ग की नियुक्ति करते हैं । इस बात को प्रमाणित करने के लिए आपको दिल्ली की टेलीफ़ोन डायरक्टरी का अध्ययन करना चाहिए । जब आप उसमें छपे नाम पढने लगेंगे तो आपको खुद मालूम हो जाएगा । सभी नगरों में यही हालत है । भारत का शासकीय वर्ग मूल रूप से भारत के राजधानी प्रकार के नगरों में रहते हैं – जैसे बम्बई, दिल्ली, मद्रास, कलकत्ता आदि । यह मूल रूप से नगरों में रहने वाले सम्पन्न लोग होते हैं ।

शासन चलाने वाला यह वर्ग केन्द्रीय सरकार या प्रधानमन्त्री से अधिक प्रबल होता है। यदि यह वर्ग 'न' कह दे तो न तो प्रधानमन्त्री, केन्द्रीय मन्त्री मण्डल कुछ कर सकता है और न ही किसी प्रान्त का कोई मुख्यमन्त्री ।

मैं इसकेलिए एक सुन्दर उदाहरण दूँगा जिससे आपको दृढ विश्वास हो जाएगा कि यह 'शासक - वर्ग कितना प्रबल होता है और प्रधानमन्त्री तथा उनकी आभूषण मण्डली कितनी बलहीन । छूतछात पर किसी कानून द्वारा नहीं बल्कि संविधान में निषेध लगाया गया है । यदि कोई इसका व्यवहार करता है तो उसे या तो जेल की सज़ा होगी या जुर्माना डाला जाएगा या दोनों ही सज़ाएँ दी जाएँगी । छूतछात का व्यवहार न केवल कानून-विरोधी कृत्य है बल्कि यह तो संविधान के भी विरुद्ध है । लेकिन हुआ क्या ? संविधान को लागू करके 1951 से आज तक कितने वर्ष बीत गये ? क्या छूतछात का व्यवहार गया ? क्या आप यह संदेह करेंगे कि छूतछात पर निषेध लगाने के प्रयत्नों में प्रधानमन्त्री, केन्द्रीय मन्त्री मण्डल और प्रान्तीय सरकारें ईमानदार नहीं थीं ? छूतछात पर निषेध लगाने में तमिलनाडू के मुख्यमन्त्री करुणानिधि तक क्यों असमर्थ रहे ? क्या वे यदि प्राधानमन्त्री बन जाएँगे तो सफल हो जाएँगे? इन बातों को जाने दीजिए । यदि पेरियार जी को प्राधानमन्त्री बना दिया जाता तो क्या वे इसमें सफल हो जाते ? जी नहीं । न तो संविधान, सरकार, संसद, उच्चतम न्यायालय छूतछात पर निषेध में सफल हो सके और न ही प्रान्तीय सरकार । क्योंकि भारत का शासक-वर्ग चाहता था कि छूतछात का सिलसिला चलता रहे ।

हमारे दिमागों पर किसका नियन्त्रण है ?

अगर शासक - वर्ग कुछ चाहता है तो संसार की कोई ताकत उसे नहीं रोक सकती। चाहे जो हो जाय । अतः भारत पर सरकार शासन नहीं करती बल्कि शासक - वर्ग करता है।

इसी तरह हम असंख्य उदाहरण देते चले जा सकते हैं । लेकिन इतना कहना काफी होगा कि 'हिन्दू भारत' में 'ब्राह्मणशक्ति ही सरकार और संविधान से अधिक श्रेष्ठ है । वह हर चीज़ से उच्चतम है । क्योंकि ब्राह्मण लोग ही शासक - वर्ग हैं ।

भारत में मुख्य रूप से ब्राह्मण ही शासक - वर्ग बनते हैं । मार्क्स, लेनिन और माओ तक इस बात को अच्छी तरह जानते थे । जब मैं 1980 में एक सद्भावना प्रतिनिधी - मण्डली का नेतृत्व करते हुए चीन गया था तो कई चीनी उच्च अधिकारियों ने मुझे बताया कि वे भारत में ब्राह्मणों के प्रभाव के बारे में जानते हैं । उन्होंने इसे ब्राह्मणशाही का नाम दिया । भारतीय तथा विदेशी इतिहासकारों ने यह स्वीकार किया है कि सदियों की प्रधानता ने उनको लोगों के नेता, धर्म के ठेकेदार, जीवन के हर क्षेत्र के अद्वितीय सेनापति, सम्पत्ति और सत्ता के स्वामी और साथ ही पुरोहित होने के नाते लोगों की अन्तरात्मा का रखवाला बना दिया । शायद संसार के और किसी वर्ग के लोगों ने ऐसी सर्वमिश्रित सत्ता को केवल अपनी ही मुट्ठी में दबा न रखा होगा जैसे ब्राह्मणों ने कब्जा जमा रखा है । भारतीय संस्कृति तो ब्राह्मण संस्कृति ही है । हमारी शानदार पुश्तैनी संस्कृति ब्राह्मणों द्वारा की गई भारी करतूत है जो उन्होंने संस्कृति के रखवाले बनकर की ।

देवाधिनम जगत सर्वम
मन्त्राधिनम ता देवता,
तान मन्त्रम ब्राह्मणाधिनम
ब्राह्मणा मम देवता ।

अर्थात, यह सारा विश्व देवताओं की शक्ति के नीचे है; देवता लोग मन्त्रों की शक्ति के नीचे हैं, सारे मन्त्र ब्राह्मणों की शक्ति के नीचे हैं । अतः ब्राह्मण ही हमारे देवता हैं । (द एब्ब जे.ए. डुबोयूस, हिन्दू म्यानर्स, कस्टम्स एण्ड सेरेमोनीज़, ऑक्सफ़ोर्ड, तीसरा प्रकाशन - 1906, पृष्ठ 139).

समाज के समानाधिकारवाद विरोधी सिद्धान्त की जड़ें :-

हिन्दू भारत में भगवान के न होने का कोई ज्ञान रखता है, तो वह ब्राह्मण मात्र है । इसीलिए ब्राह्मण खुद को 'भू - देवता' कहते हैं । और ऐसे अनगिनत शतमूर्ख हैं जो इस पर विश्वास रखते हैं ।

भारत में चाहे वह जनता पक्ष हो या इन्दिरा गाँधी का शासन, इन सब में हम निरंकुशता और समाज के सामानाधिकार विरोधी सिद्धान्त की प्रवृत्ति ही देख रहे हैं । हम सब जानते हैं कि जनता पक्ष के शासन के दौरान आर.एस.एस. ने क्या-क्या विनाश फैलाये। ब्राह्मणों और बनियों की इस संस्था ने पहली बार केन्द्र सरकार पर कब्जा जमाया और मनमानी की । आर.एस.एस. खुल्लम खुल्ला निरंकुशता की वकालत कर रहा था और एक प्रकार की जाति श्रेष्ठता लागू करने के लिए सब कुछ किया । यही प्रवृत्ति इन्दिरा गाँधी और

संजय गाँधी के आपत्कालीन शासन में भी देखी गई । चूंकि उसने निरंकुशता लादने की कोशिश की, इसलिए लोगों ने उसके विरुद्ध वोट देकर उसे सत्ता से बाहर निकाल फेंका और जनता पक्ष का शासन लाया जो जाति-श्रेष्ठता की प्रवृत्ति में इन्दिरा गाँधी से भी आगे निकल गये । इससे पता चलता है कि चाहे वह कांग्रेस हो या जनता पक्ष, हिन्दू भारत की प्रवृत्ति ही जाति-श्रेष्ठतापूर्ण निरंकुशता है । इसका कारण यह है कि ब्राह्मणवाद का नाम ही जाति-श्रेष्ठता है । वास्तव में हिटलर, मसोलोनी आदि जैसे संसार के प्रचण्ड मानव-समानता विरोधी लोगों ने इसकी प्रेरणा ब्राह्मणवाद ही से ली । मानव-समानता विरोधी फासिज़म के पिता नित्शे जो फ़ासिज़म का दादा या शिष्य था अपनी मानसिक शान्ति को उपनिषदों के दर्शन में पाया । ब्राह्मणों की विचारधारा जो भयानक कर्म-सिद्धान्त' पर आधारित है, लोगों से कहती है कि वे दरिद्रता को हँसते-हँसते झेलें और खुद को भाग्य के हवाले कर दें ।

एक जाति-श्रेष्ठता की मांग ही असन्दिग्ध आज्ञा-पालन है । और गीता (IV - 39 - 40) खुद इस सिद्धान्त का उपदेश देती है । "परन्तु बिना ज्ञान और विश्वास, जिस व्यक्ति ने शंका की, वह भटक गया; उस व्यक्ति को जिसने संदेह किया, न इहलोक मिलेगा न परलोक और न ही सुख । 'शासक वर्ग' अपने शासित जनों से कहता है कि वे विरक्त रहें और यह वैराग्य गरीबों की पीडा, को छिपाने का एक अद्भुत साधन सिद्ध हुआ है । 'कर्म-सिद्धन्त', 'सम्पन्न वर्ग' के लिए बडी सुविधापूर्ण और चतुर विचार-धारा है । वे धनी तथा सम्पन्न क्यों हैं ? क्योंकि पिछले जन्म में उन्होंने बहुत सारे पुण्य किये थे । यह गरीब लोग दरिद्र क्यों हैं ? क्योंकि उन्होंने असंख्य पाप किये थे । यदि वह भगवान की सेवा करे, तो क्या उसे पुण्य मिलेगा ? हाँ ! चलो देखेंगे । बिना किसी शर्त के उसे सेवा तो करने दो। यदि वह कोई अच्छा काम कर रहा है तो उसे वह काम बिना किसी शर्त के करना चाहिए । बिना किसी फल की प्रतीक्षा के । यदि वह कोई अच्छा कर्म फल की इच्छा से करे तो हो सकता है उसे फल न भी मिले ।

क्या हम शासक वर्ग की 'कर्म-सिद्धान्त' से भी अधिक सुविधायुक्त कोई और विचारधारा सोच सकते हैं ? जाति-प्रथा को तो दैवी अनुमोदन मिला हुआ है । कृष्ण गीता में हमसे कहते हैं कि मैं जाति-प्रथा निर्माता हूँ (गीता - 4 - 13, 10-36, 41) ।

उपनिषदों ने भी जाति-प्रथा को अनुमोदन दे रखा है । 'वे जिनका व्यवहार यहाँ सुखकर है - वह निश्चय ही किसी सुखकर गर्भस्थान में प्रवेश करेगा, या तो किसी ब्राह्मण के गर्भस्थान में, या एक क्षत्रीय के गर्भस्थान में, अथवा किसी वैश्य के गर्भस्थान में प्रवेश करेगा । परन्तु वह जो यहाँ गंदा व्यवहार करेगा – वह निश्चय ही किसी सडे हुए गर्भस्थान में प्रवेश की ही आशा रखे वह गर्भस्थान किसी कुत्ते, सुअर या अछूत का होगा । (चन्दोग्या उपनिषद - 5 - 10 - 7) ।

शूद्र का कर्तव्य क्या है ? गीता (18-44) कहती है : 'सेवा ही शूद्र का कर्तव्य है ।' 'मनु के कानून' (1, 91) कहते हैं - 'भगवान ने शूद्र को आदेश दिया है कि वह इन तीनों

(अन्य) जातियों की सविनय सेवा करे । ' 'राजा सदा खुद शूद्रों को हुक्म दे कि वे द्विज जातियों की सेवा करें । (मनु 8 - 41) । ब्राह्मणों की सेवा करना शूद्रों का उच्चतम कर्तव्य है ।

ब्राह्मणवाद से बढ़कर समाज - विरोधी विचारधारा और कोई हो ही नहीं सकती । गाँधी जो हिन्दुओं के बडे नेता थे, इस ब्राह्मण फ़िलासफ़ी के समर्थक थे । इसी लिए आज ब्राह्मण गाँधीवाद के अनन्य भक्त हैं, जबकि गाँधी की हत्या करने वाला आर.एस.एस. ही का एंक ब्राह्मण था । ब्राह्मणवाद बलि (चढाने) और पीडा को एक महान.धर्म के रूप में गौरवान्वित करता है । नित्शे की फ़िलासफ़ी ब्राह्मणवाद से बहुत गहरा मेल रखती है, विशेषकर 'कर्म-सिद्धान्त' से उसने काफ़ी उधार लिया । जैसे भगवान खुद चाहते हों कि मानव असमान रहें । अतः इसकेलिए दैवी अनुमोदन है । गाँधी ने इसका समर्थन करते हुए अपने निक्षेपधारी (अमानतदार) के पद के भयानक सिद्धान्त की सृष्टि की ।

आर्यों की जाति-प्रथा ने मानव समानाधिकार विरोधी सिद्धान्त की फिलासफ़ी को प्रेरणा दी - - - (एम.एन.रॉय, फासीज़म पृष्ठ - 40)। 'समानाधिकार-विरोधी सिद्धान्त (फ़ासीज़म) का फ़िलसफ़ा (विचार) पूर्णरूप से भारतीय अध्यात्मिकता के सदृश्य है (पृष्ठ - 43)। गीता, उपनिषद आदि तो मानव समानाधिकार विरोधी सिद्धान्त के 'धर्म-ग्रन्थ' हैं । 'फ़ासीज़म' का उद्देश्य क्या था ? मार्क्सवाद को नष्ट करना । ब्राह्मणवाद का उद्देश्य क्या है? वर्णाश्रमधर्म को स्थायी बनाये रखना तथा ऊँची जाति वालों के विशेष अधिकारों को स्थायी बनाये रखना । अतः ब्राह्मणवाद समानाधिकार-विरोधी सिद्धान्त का जन्मदाता है । अडाल्फ हिटलर और उसकी टोलियों ने जर्मन यहूदियों के विरुद्ध एक काल्पनिक घृणा की उत्तेजना को फैलाना आरम्भ किया । और भारत में ब्राह्मणवाद भी मुसलमानों के विरुद्ध ऐसी ही काल्पनिक घृणा का उपदेश देते हुए हिन्दुओं से कह रहा है कि वे मुसलमानों को भारत से निकाल दें और उनका खून पी जायें । आर.एस.एस. की मुसलिम-विरोधी घृणा नाजियों के भयंकर अन्य जाति-विरोधी सिद्धान्त का ही दूसरा रूप है ।

संसार के स्वस्थ-चित्त (बुद्धिमान) लोगों ने मिलकर द्वितीय विश्वयुद्ध के रणक्षेत्र में नाज़ीवाद का नाश किया । संतान मर चुकी होगी, परन्तु फ़ासीज़म के बाप (ब्राह्मणवाद) का संहार अभी बाकी है । यदि भारत को मानवता के समानाधिकार विरोधी सिद्धान्त से बचाना है तो हमें ब्राह्मणवाद का नाश करना होगा ।

इसलिए सारे भारत में ऐसे 'ब्राह्मण-प्रभुत्व विरोधी' सम्मेलनों का आयोजन करना होगा और इस महान कार्य के लिए द्राविडा कलगम को सूत्रपात्र लेना होगा ।

पवित्र धर्मग्रन्थ

विपरीत वचनों (विरोधाभास) का एक पुलिंदा ।

वे लोग जिन्हों ने 'पवित्र धर्म-ग्रन्थों' विशेषकर उपनिषद एवं गीता का सूक्ष्म रूप से अध्ययन किया है उन्होंने देखा होगा कि ये ग्रन्थ किस प्रकार शब्दों के उलट-फेर, बार-बार आग्रहपूर्ण और काल्पनिक दर्शन (फ़िलसफ़े) से भरे हुए हैं । 'आत्मा' और 'ब्राह्मण' का वर्णन अपने ही प्रकार का शब्द-जाल है जिसे बार-बार दोहराया गया है (ब्राह्मणविद्योपनिषद 81-111), (तेजो - बिंदोपनिषद 111 -1 -43), (अन्नपूर्णोपनिषद - 11 - 3 -6), (दर्शनोपनिषद - x 1 - 5) जिनके पास कहने को कुछ नहीं होता वे शब्दों का एक (जगल) कानन खडा कर देते हैं । संक्षेप, हेतुवाद की आत्मा होता है । परन्तु यदि उद्देश्य विशेष व व्यक्त रूप से कहना न हो तो निरर्थक शब्दों की बौछाड ही होगी । 'पवित्र ग्रन्थों' का लक्ष्य लोगों को हेतुवादी-तर्क को स्पष्ट करने से अधिक उनको व्यग्रता व उलझन में डालना है । निरर्थक शब्दों का जाल इसलिए बुना गया है ताकि पाठकों को पकडकर उलझनों, दोषभाव आदि की सीमा में जकड दिया जाय । इस प्रकार वे कुएँ के मेंढक की भाँति अपने ही सीमित वृत्त में फँसे रहेंगे । सारा ग्रन्थ मूर्खतापूर्ण (हास्यास्पद), केवल शब्दों की भूल-भलैयाँ, किसी अर्थ या महत्व से रहित लगता है ।

कुछ भी हो, वास्तविकता का जादू ही शब्दों के समूह को जीवन प्रदान करता है । उच्च स्वर में किसी वाक्पटु द्वारा दिया गया अत्युत्तम व्याख्यान तक जो कानों को किसी मधुर संगीत की तरह सुखदायक लगे व्यर्थ सिद्ध होगा यदि उसमें जीवन की वास्तविकता न हो । 'किसी मण्डली में सर्वाधिक मेधावी, किसी वाद-विवाद में सर्वाधिक योग्य और जीवन के व्यापार में सर्वाधिक मनपसंद व्यक्ति वह होगा जिसने असंख्य वास्तवीकताओं को अपनी विचार शक्ति में पचा लिया हो' (जे. लेण्डिस, जिसका हवाला न्यायाधीश वी.आर. कृष्णा ऐयर ने उच्चतम न्यायालय के अपने निर्णय में दिया था, नवेम्बर 14, 1980) ।

तेजो-बिन्दोपनिषद (111 - 48-59) कहता है कि "हरचीज़ मिथ्या है । मन की प्रकार मिथ्या है - - - सारे वेद सदा मिथ्या हैं । जान लो कि सारे शास्त्र मिथ्या है - - - जान लो कि सारे जीव मिथ्या हैं, सारा सुख-भोग मिथ्या है - - - यह जान लो कि आनन्द और शोक मिथ्या हैं विजय तथा पराजय सब मिथ्या है - - - । इस प्रकार तेजो-बिन्दोपनिषद के अनुसार हर वस्तु मिथ्या है । उपनिषद के अनुसार यदि सब कुछ मिथ्या ही है तो तोते की तरह वेद-पाठ करने वाला ब्राह्मण दक्षिणा लेने से इन्कार क्यों नहीं कर देता जब कि धन भी तो मिथ्या ही है ? उपरोक्त उपनिष्द (V - 31 -58) में वेदों का अध्ययन तक मिथ्या घोषित किया गया है । तो फिर ब्राह्मण वेदों को इतना महत्व क्यों देते हैं ? क्या इस से अधिक विरोधी वचन कोई और हो सकता है ?

एक और मज़ेदार बात यह है कि एक ब्राह्मण देवता दूसरे ब्राह्मण देवता को पसंद नहीं करता । एक साम्प्रदायिक या एक पन्थ का उपनिषद अपने देवता को दूसरे पन्थ के

देवता से श्रेष्ठ घोषित करता है । ब्राह्मण फ़िलसफ़े की मज़ेदार बात यह है कि एक ब्राह्मण देवता दूसरे देवता से घृणा करता है । यह बडे आश्चर्य की बात है कि इन देवताओं का व्यवहार हम नश्वर मानवों से भी गया गुज़रा है विशेषकर जब वे आपस में लड़ते हैं ।

शरभोपनिषद (17 - 19) दावा करता है कि विष्णु, शिव के भक्त हैं । यदि भगवान एक है और उसके अनेक नाम एवं रूप होने पर भी, वह एक ही है, इन पवित्र वेदों के व्याख्या-पण्डितों के बिना थके कहने के अनुसार यदि वह अविभाज्य है तो ये प्रतिस्पर्धी दावे क्यों तथा अपने इष्ट-देवत्र को बेचने के लिए यह संघर्ष क्यों ? शरभोषनिषद दावा करता है कि 'भगवान शंकर सब देवताओं में श्रेष्ठ हैं । यदि भगवान एक है तो फिर उसमें श्रेणियाँ कैसे हो सकती हैं ? यह क्या बकवास है ? और वे इसे पवित्र धर्मग्रन्थ कहते हैं तथा हम शतमूर्ख इस पर विश्वास कर लेते हैं ।

म्याक्स मुलर का निर्णय :

'पवित्र-ग्रन्थों' का सर्वश्रेष्ठ ज्ञाता एवं प्रकाण्ड पण्डित इस विषय पर क्या फैसला सुनाता है सुनिए; प्रोफेसर म्याक्स मुलर जो संस्कृत का अद्वितीय विद्वान 'ब्राह्मणों' की आलोचना करता हुआ कहता है : यह कोई कल्पना भी नहीं कर सकता कि उतने आदि काल में जबकि समाज की स्थिति अभी आदिम थी, एक ऐसे साहित्य का प्रादुर्भाव हुआ हो जो पाण्डित्य के आडम्बर और निपट मूर्खता से भरा हुआ हो तथा जिसकी तुलना करने के लिए वैसा साहित्य विश्व में कहीं और न प्राप्त हो । तत्कालीन सदृश साहित्य में इसकी कोई झलक तो नज़र आती 1 इन ग्रन्थों का सामान्य चरित्र ओछे, निःसत्व, वाक्पटुता से भरा हुआ है जिसे अहंकारी पुरोहितों ने ऐसे सजाया है जैसे कोई कबाडी पुरानी वस्तुओं का प्रदर्शन करता है । इतिहासकार को यह जानने के लिए जानकारी महत्वपूर्ण है कि एक हरे-भरे ताज़े और स्वस्थ देश की प्रगति पुरोहिती छल एवं अंधविश्वासों द्वारा कितनी जल्दी रोगग्रस्त हो सकती है । यह जानना अत्यन्त आवश्यक है कि राष्ट्र अपनी युवावस्था एवं मतिक्षीण वुढापा दोंनों अवस्थाओं में ऐसे व्यापक रोगों के अधीन आ सकते हैं, तो ग्रस्त हो सकते हैं । इन ग्रन्थों का निरीक्षणीय अध्ययन उसी प्रकार करना होगा जिस प्रकार एक वैद्य किसी जडमूर्ख की बकवास या किसी पागल की बडबडाहट का अध्ययन करता है ।' (एन्शियंट संस्कृत लिटरेचर, पानिनी एडीशन, पृष्ठ - 200)।

प्रश्नोपनिषद (11 - 16-23) में मानसिक स्थिति को 'ब्राह्मण' अवस्था तक पहुँचाने के लिए स्त्री-सम्पर्क का परित्याग करने का आदेश दिया गया है; यहाँ तक कि अपनी पत्नी से भी दूर रहे । परन्तु योगाशिखोपनिषद (1 - 52-58) में ब्राह्मण बनने के लिए लैंगिक संबन्ध पर बहुत ज़ोर दिया गया है । ये 'पवित्र-ग्रन्थ' विरोधी बातों से इस हद तक भरे हुए हैं कि कभी-कभी न केवल एक ग्रन्थ दूसरे ग्रन्थ की बात को रद्द कर देता है, बल्कि एक ही ग्रंथ का एक परिच्छेद दूसरे परिच्छेद को रद्द कर देता और ऐसा निरन्तर चलता ही रहता है ।

जिस प्रकार इसलाम और ईसाइयत धर्म हैं, ब्राह्मणवाद उस प्रकार के धर्म से अधिक एक कानून है । इसमें कानून, प्रतिबन्ध, "करो" - "न करो" एवं यथाविधि आचार भरे हुए हैं जिसमे नैतिक सूत्र का कोई सत्व ही नहीं । इसमें छल और पाखण्ड मूर्तिमान है । ब्राह्मणवाद प्रचलित नियमों से ही सन्तुष्ट है । कोई भी पाप या अपराध कर सकते हैं जिसे धो देने में उपनिषद पूर्णरूप से समर्थ है । भस्मजाबलोपनिषद - 11 कहता है – वह, जो इस (भस्म) का उपयोग करता है उसका मातृ-हत्या का पाप घुल जाता है ।' शर्बोपनिषद (35 - 39) कहता है – शास्त्रों का अध्ययन करने वाले को गुरु-पत्नी के साथ सोने के पाप से भी रक्षा मिल जाती है ।

भगवद गीता कहती है (IV - 48, 53, 54) 'ज्ञान की कोई जरूरत नहीं है न ही वेदों के अध्ययन की कोई आवश्यकता है । यदि विश्वास हो तो नीच से नीचतम व्यक्ति को भी भगवान का आशीर्वाद मिल जाता है ।' अर्थात् विद्वत्ता अथवा श्रद्धा की कोई आवश्यकता नहीं है, केवल विश्वास – असंदिग्ध विश्वास – अन्धविश्वास । न जाँचपडताल की आवश्यकता है न विवेकशीलता की । यह कैसा जाँच पड़ताल हीन झक्की सिद्धान्त है!

उपनिषद घोषित करते हैं कि संसार माया है । यदि संसार का अस्तित्व नहीं है तो फिर न कर्त्ता का अस्तित्व है न ही कर्म की वस्तु का; तो फिर कर्तव्य और कर्म के करने का सवाल ही कहाँ पैदा होता है ? (अरुण शौरी, 'हिन्दूइज़म', विकास 1979, पृष्ठ 168)

जब कभी हम ब्राह्मणवाद की आलोचना इस बात पर करते हैं कि वे क्यों लोगों का काम नहीं करते, श्रमदान की बात छोडिए, दूसरों की तरह तुम भी कर्म क्यों नहीं करते, तो ब्राह्मणवाद के रक्षक उपनिषदों का हवाला देते हैं कि उपनिषद केवल साधारण लोगों को काम करने का आदेश देते हैं, ब्राह्मणों को नहीं । लेकिन इस 'कर्म' का अर्थ क्या है ? यदि आज हमें कोई काम (कर्म) करने का आग्रह करता है तो हम खुदबखुद बडी तत्परता के साथ यह समझ लेते हैं कि वह व्यक्ति हमें संसार के स्वाभाविक संघर्षमय काम में लगाने की बात कर रहा है, अपने जैसे लोगों के काम में सम्मिलित होने के लिए कह रहा है । लेकिन उपनिषद के लिखनेवालों के मन में 'कर्म' का अर्थ यह नहीं होता । इन ग्रन्थों के पढने वालों के लिए 'कर्म' का अर्थ धार्मिक विधियाँ, बलि-चढावे आदि होते हैं जिनका आदेश पूर्वमिमाम्सा में दिया गया है, वे मन्त्र जिनको साम-वेद या चन्दोग्योपनिषद में गौरवान्वित किया गया है । इन सब में कर्म का मतलब वेदों का पढना, बलि चढाना, उपहार व दक्षिणा देना, तपस्या, व्रत आदि का पालन करना है जिसके सम्बन्ध में बृहत आर्यकोपनिषद में चर्चा की गई है (4-4-22) और (पृष्ठ - 179)।

विरोधाभास (विपरीत वचन) ही 'पवित्रग्रन्थों' का सार है । कोई भी व्यक्ति किसी भी बात की व्याख्या अपनी इच्छानुसार कर सकता है । शंकरा, रामानुजा, माधवा, गाँधी, तिलक एवं गोडसे ने तक इनकी व्याख्या अपनी इच्छानुसार की है और यह वाद-विवाद सदियों से चल रहा है । मज़े की बात यह है कि अपनी बात को सच्ची सिद्ध करने के लिए

और अपने काण्डों को ठीक साबित करने के लिए संत और शैतान दोनो इन ग्रन्थों का हवाला दे सकते हैं । अतः इन ग्रन्थों का तथाकथित लचीलापन आकस्मिक न होकर सावधानी से किया गया निश्चय है ।

नीति विषयक तथा सामाजिक ज़िम्मेदारी :

ब्राह्मणों द्वारा सृष्टि किये गये 'पवित्र-ग्रन्थ' एक शरारती व उपद्रवी चित्र बनाने का प्रयत्न है जिसका उद्देश्य देखने वाले को उलझन में डालना है, चाहे वह किसी भी दृष्टि-कोण से देखे । इस लिए, उनका इरादा स्पष्ट हो जाता है कि वे लोगों को उलझाकर, व्याकुल व भयभीत करके, और गलत रास्ते पर डालकर ब्राह्मणों को अपनी लूट के साथ भाग जाने में सहायता दें । ब्राह्मणों ने यह कपटी खेल भोले-भाले लोगों के साथ सफलतापूर्वक खेला है, यह घोषित करके कि हर चीज़ 'मिथ्या' है । अरुणशौरी कहते है - 'मूल प्रश्न निम्नलिखित है : यदि मनुष्य को अवर्णनीय, और शरीररहित घोषित कर दिया जाय, यदि सारे प्रायोगासिद्ध सम्बन्धों को काल्पनिक घोषित कर दिया जाय, यदि प्रायागासिद्ध संसार को अस्तित्वरहित घोषित कर दिया जाय, तब फिर नीति विषयक के लिए स्थान कहाँ रह जाता है, अपने सहमानवों को दुख से छुटकारा पाने में सहायता करने की प्रार्थना करने का अवसर ही कहाँ रह जाता है ? जिस प्रकार श्वीज़र ने एक बार पूछा था, एक 'मिथ्या' संसार में नीति का क्या प्रयोजन (काम) है ? अस्तित्वरहित समाज़ में सामाजिक जिम्मेदारी का सवाल ही कहाँ पैदा होता है ? (पृष्ठ - 211)।

गीता (XVI - 1 - 5) जीवों के लिए दया व करुणा की बात करती है; परन्तु उसमें मानवों के प्रति दया का उल्लेख क्यों नहीं है ? न ही इस में मनुष्य द्वारा मनुष्य के शोषण की कोई बात की गई है । ईसाइयत, इसलाम और अन्य धर्मों में नीति विषयक धर्म का अटूट अंग है । परन्तु ब्राह्मणवाद (हिन्दूवाद) में ऐसी कोई बात नहीं है । केवल मन्त्रों का जाप कर देने, अथवा एक माला धारण कर लेने या विभूति लगा लेने अथवा कुछ रूपये दक्षिणा में दे देने आदि से व्यक्ति अपने पापों को सरलतापूर्वक धो डालता है । यदि पापों को धो देना इतना आसान है तो फिर क्यों न अधिक से अधिक पाप करें और फिर मन्त्रों का जाप करके उनको धो डालें ? यह सब हास्यकर तथा एक तमाशा है ।

कृष्ण द्वारा अर्जुन को कही गई इन बातों (गीता - 18, 17) - 'वह जिसमें अहंकारी विचार नहीं हैं, जिसका मन कलुषित नहीं है, हालाँकि वह इन प्राणियों की हत्या करता है, वास्तव में वह हत्या नहीं करता, इस हत्या के लिए वह ज़िम्मेदार नहीं हैं ।' की आलोचना करते हुए अरुण शौरी कहते हैं – खुद कृष्ण को अपने रसिक कारनामों के बावजूद उपनिषदों के अविवादित घोषित करने के मूल में भी यही कारण होगा (पृष्ठ - 220)। यह विवाद ऊपर की परिस्थिति के लिए इतना पक्का सिद्ध होता है जैसे बोलकर बनाया गया हो । कृष्ण की लैंगिक लीलाएँ यदि कोई और किया होता तो उसे संसार के नीचतम कामुक का नाम दे दिया गया होता । परन्तु कृष्ण के मामले में इसी बात का समर्थन क्यों किया गया ? ये ग्रन्थ

किस प्रकार के निरर्थक व दो मापदण्डों वाली बातों का उपदेश देते हैं ! यदि कृष्ण करता है तो दैवीकार्य । यदि कोई और करे तो व्यभिचारी ।

हम एक दर्जन उपनिषदों का हवाला दे सकते हैं जो एक ही बात और शब्द को दरजन-भर अर्थ देते हैं, जैसे 'ऊँ' । जब केवल विभिन्न व्याख्याएँ और अर्थ देंगे, तभी जाहिल (भोल-भाले) लोगों को उल्लू बनाना सम्भव हो सकेगा । किसी भी अनुच्छेद के एक भाग का ज़िक्र करो, उसकी इच्छानुसार व्यख्या करो अथवा अर्थ दो, इसके वावजूद बच निकलो । यदि कोई ललकारे तो उसे भगवान-विरोधी, ब्राह्मण-विरोधी, हिन्दू-विरोधी का कलंक लगाकर खत्म कर दो । शंकरा जैसे लोग जिनको इन 'पवित्र-ग्रन्थों' के महान भाष्यकार समझा जाता है, एसीं विरोधी बातों की गठरी के विषय में चुप रह गये । यदि किसी ने वैज्ञानिक दृष्टि-कोण से इन ग्रन्थों का गम्भीर अध्ययन करना चाहा तो पागल हो जाएगा । किसी भी शब्द अथवा वाक्य को कोई भी अर्थ दिया जा सकता है । उपनिषद, ब्रह्मसूत्र, गीता विपरीत रूप से विरोधी घोषणा करते हैं । शंकरा एक अर्थ देता है तो रामानुजा का अर्थ उससे भिन्न होता है । 'आत्मा' क्या है और 'ब्राह्मण' किसे कहते है जैसे महत्वपूर्ण विषयों के बारे में विभिन्न उपनिषद विभिन्न अर्थ देते हैं जो अक्सर एकदूसरे के विरोधी होते हैं । दो सर्वोच्च भाष्यकार शंकरा और रामानुजा इतना भ्रम पैदा कर देते है कि पढने वाला आश्चर्य से बुरी तरह चकराकर रह जाता है । यह सब एक नाटक है, स्वाँग है।

बकरी का बच्चा और भेडिया

कहते हैं कि हिन्दूवाद (ब्राह्मणवाद) 'सर्वेजना सुखिनो भवन्तु' का उपदेश देता है । अर्थात् हर एक व्यक्ति की रक्षा की जाएगी । मतलब यह कि शोषक और शोषित दोनों साथ-साथ जिएँगे । यह कैसे सम्भव है ? क्या बकरी का बच्चा और भेडिया एक साथ जी सकते हैं ? दो विपक्षी शक्तियाँ जिनका हित परस्पर विरोधी रूप का हो किस प्रकार एक साथ रह सकते हैं ? हो सकता है कि भेडिया बछिये को आश्वासन देता जाये, पर कब तक? जब वह भूखा होगा तब बछिया को खा जाएगा । ब्राह्मणवाद के कानून में यही तो होता रहा है । 'सर्वोजना सुखिनो भवन्तु' एक ऐसा आसान फिलसफ़ा है जिस की सहायत से बकरे के बच्चे को चाँदी की प्लेट में रखकर भेडिए के सामने पेश कर दिया जा सके । बेचारा गरीब, भोलाभाला बकरी का बच्चा सदियों से ब्राह्मणवाद पर विश्वास करता रहा और अन्त में उसका शिकार बन गया । क्या संसार में इस से भी अधिक हृदयहीन फिलसफ़ा कोई और हो सकता है ?

ब्राह्मणों ने सदियों से अपना एक विश्राम-प्रिय (आरामपसंद) वर्ग बना रखा है । चूँकि हर एक 'शिक्षित-व्यवसाय' उन्होंने अपने लिए सुरक्षित कर रखा है इस लिए स्वाभाविकरूप से वे तीन ही कलाओं में निपुण होंगे -- पढना, लिखना और बोलना । ये लोग और कुछ नहीं जानते । इन तीन 'कलाओं' से सम्बन्धित सारे व्यवसाय इन्हीं के लिए

सुरक्षित थे । ये सम्पत्ति के निर्माता कभी नहीं रहे । इसलिए कि सम्पत्ति को उत्पन्न करने के लिए श्रम करना पडता है और काम करने के लिए पसीना बहाना पडता है जबकि इनको काम के लिए मनाही है । इनको काम करने की ज़रूरत भी नहीं थी, क्योंकि इन्होंने श्रम वाले सारे काम एक 'दास-वर्ग' के लिए सुरक्षित रखे थे और ये दास उन कामों को करने के लिए तत्पर रहते थे ।

जब ब्राह्मणों को काम नहीं करना था, ज्यादा से ज्यादा खाने और ज्यादा से ज्यादा सोने की सुविधा थी, तो वे और कर ही क्या सकते थे ? अतः आलसी दिमाग शैतान का कारखाना बनता गया । वे अपनी सुख-भोगी स्थिति बनाये रखने के लिए षड्यंत्र रचने लगे। अपने पद, विशेषाधिकार और जायदाद जो ब्राह्मणों का एकाधिकार है बनाये रखने के लिए उन्होंने अपने चतुरतम आविष्कार 'पवित्र ग्रन्थों' द्वारा जनता को मूर्ख बनाना शुरु कर दिया ताकि सारी सम्पत्तियों पर अपनी जकड बनी रहे । वे अपने धर्म-ग्रन्थों को पढने और उनकी व्याख्या करने में व्यस्त हो गये । चूँकि उनके पास नष्ट करने के लिए अपार समय था, इसलिए खाली संदूकों को भरना उनके लिए एक मनारंजन था जब विभिन्न अर्थ और व्याख्याएँ असफल होने लगीं तो वे उनको बार-बार दोहरा कर आनन्द लेने लगे । इनके इन खुले रूप से खोटे और अर्थहीन प्रयत्नों को कोई भी जिज्ञासु आँख देख सकती है । इसके बावजूद, इन जाहिल शूद्रों को देखिए; वे इन ग्रन्थों का कितना आदर करते हैं । वे कैसे जड़मूर्ख रहे होंगे ।

ब्राह्मण की श्रेष्ठता को स्थापित करना ही एकमात्र उद्देश्य है । वह न केवल पुलिस और अभियोक्ता बन गया बल्कि फाँसी देने वाला जल्लाद भी – सब मिलाकर एक ! क्या इस जैसी विचार-धारा संसार में कहीं और है ?

ब्राह्मणवाद की छाया तले हर बात सम्भव है बशर्तेकि वह ब्राह्मण के हित में हो । सत्य साई बाबा का 'शून्य में से कुछ निकालना' इसी ब्राह्मण-सिद्धान्त पर आधारित है, क्योंकि वह खुद देवता जो है !

ब्राह्मण पदार्थ या द्रव्य के बिना सृष्टि कर सकता है, क्योंकि देवता किसी भी द्रव्य के बिना जो चाहे वह पैदा कर सकता है । यह उस सिद्धान्त पर आधारित है जिसके अनुसार ब्राह्मण बिना पदार्थ के अपनी इच्छानुसार हर वस्तु प्राप्त कर सकता है । कैसा अद्भुत तर्क है !!

पागल दुनिया :

हमसे कहा गया है कि 'धर्म-ग्रन्थ' अकाट्य हैं, क्योंकि उनकी उत्पत्ति ब्राह्मण से होती है । परन्तु हम यह कैसे जान सकते हैं कि इनकी उत्पत्ति ब्राह्मण से होती है ? वास्तव में ग्रन्थ स्वयं कहते हैं कि वही उनका स्रोत है - - - - चूँकि धर्म-ग्रन्थ ब्राह्मण उत्पन्न करता है इसलिए ब्राह्मण त्रिकालदर्शी है । धर्म-ग्रन्थों के अधिकृत होने का कारण यह है कि

उनका निर्माता त्रिकालदर्शी ब्राह्मण है । हम जानते हैं कि ब्राह्मण त्रिकालदर्शी है क्योंकि धर्म-ग्रंथ कहते है कि वह त्रिकालदर्शी है और हम जानते हैं कि धर्मग्रन्थ ज्ञान का अधिकृत स्त्रोत हैं क्योंकि इनकी उत्पत्ति एक त्रिलोकदर्शी से हुई है (पृष्ठ - 288) । कैसी बे सिर - पैर की बहस है ! केवल ब्राह्मण ही ऐसा तर्क करने के योग्य हैं ।

यही कारण है कि ब्राह्मणवाद अनगिनत आक्रमणों को सह गया और महा बलशाली बौद्ध धर्म तक इसे कुछ नहीं कर सका । किसी भी भूकम्प के बावजूद ब्राह्मणवाद जीवित रह सकता है । क्योंकि कोई भी व्यक्ति 'पवित्र ग्रन्थों' से एकाध परिच्छेद को निकालकर अपनी किसी भी बात को न्यायसम्मत सिद्ध कर सकता है । इन ग्रन्थों में आपको समाजवाद के समर्थन में भी परिच्छेद मिल जाएगा और इसके साथ ही शोषण के पक्ष में भी । आपको कुछ वाक्य लैंगिक सम्बन्ध के विरोध में उपदेश देते हुए भी मिल जाएँगे औरप साथ ही साथ इसके पक्ष में बोलते हुए भी नज़र आएँगे । आप एक ही वक्त स्त्रियों की मुक्ति के समर्थक भी बन सकते हैं और उसे गुलाम बनाये रखने के समर्थक भी । आप नीच से नीचतम तरीके अपनाकर धन संग्रह भी कर सकते हैं और साथ ही अपने इस नीच कृत्य को ग्रन्थ के किसी परीच्छेद द्वारा इस लूट को ठीक भी सिद्ध कर सकते हैं । इसके साथ-साथ सम्पत्ति की इस लूट को कोई दूषित भी घोषित कर देगा । ये ग्रन्थ एक अथाह खड्डा एक अस्तीहीन अद्‌भुत है; आप इसे चाहे जैसा आकार या नाप दे सकते हैं । यह एक पागलों, विक्षिप्तों की दुनिया है ।

इन पवित्र ग्रन्थों में ऐसी विरोधी व्याख्याओं की क्षमता क्यों है ? क्या ब्राह्मण इतने जडमूर्ख हैं जो उनको ऐसी बकवास करने का शौक हो ? जी नहीं, उनके पागलपन में भी एक तरीका है । विरोधी प्रस्तावनाओं को प्रमाणित करके रख लिया जाता है, क्यों ऐसी विरोधी प्रस्तावनाएँ आवश्यक होती हैं । इसी एक कारण से सारी विरोधी घोषणाएँ उनके ग्रन्थों में जगह पाती हैं । मनुष्य को छोटा बनाने और उसे यह विश्वास दिलाने के लिए कि वह नियमों के सामने तुच्छ एवं शक्तिहीन है, हमें एक भगवान की सृष्टि करके उसे बडे से बडा बना देना चाहिए । हमें यह कहते रहना चाहिए कि केवल वही एक सृष्टि-कर्त्ता है और वही हर चीज़ का बनाने वाला है (पृष्ठ - 339)।

अतः हिन्दू सोच ही नहीं सकते । यदि इनमें से कोई सोच भी सका तो शायद ही सीधी तरह सोच सके । इनमें से अधिक नीचतम भ्रष्ट होते हैं । भारत में केवल तोडने की प्रवृत्ति है, जोडने और संगठित करने की नहीं । यहाँ हर दल और संस्था बंट क्यों जाती है? भारत में टकराव और झगडे इतने आम क्यों हैं ? हिन्दू एक संयुक्त व संघटित राष्ट्र के रूप में कार्य क्यों नहीं करते ? वे हमेशा दलों और उपदलों में बंटते क्यों चले जाते हैं ?

हमारी सारी मुसीबतों का एकमात्र कारण ब्राह्मणवाद है । हम एक राष्ट्र कभी बन ही नहीं सकते । एकता हमारे रक्त व स्वभाव में है ही नहीं । हिन्दू शासकों के निमन्त्रण ही पर विदेशियों ने इस देश पर हमला किया । यह एक ऐतिहासिक सत्य है जिसे गुरू

गोलवालकर ने भी अपनी पुस्तक 'बंच ऑफ थाट्स' में स्वीकार किया है (विक्रम प्रकाशना - 1968, पृष्ठ 205) । क्योंकि ब्राह्मणवाद हमें व्याघ्रमुख, कपटव्यवहारी तथा कपटविचारक बने रहने का संदेश देता है । इसीलिए इसाइयों और मुसलमानों की अपेक्षा हिन्दू मूलरूप से बेईमान होते हैं । कुछ अच्छे भी हो, अपवाद नियम तो नहीं बन सकते ।

इन्हीं कारणों से हिन्दू सीधी दिशा में सोच ही नहीं सकता । बल्कि जो सीधी दिशा में सोचते हैं उनकी हँसी उडाई जाती है, उनसे घृणा की जाती है, यहाँ तक कि उनको कुत्तों की तरह भगा-भगा कर खत्म कर दिया जाता है । कोई हिन्दू अपने ही उस हिन्दू भाई पर लेशमात्र भी दया नहीं करेगा जो इन घसी पिटी रूढियों से हटकर सोचने का प्रयत्न करेगा । ब्राह्मणवाद में मतभेद का परिणाम बडा खतरनाक होता है । इसीलिए आम तौर से हिन्दू और विशेषतः ब्राह्मण शायद ही कोई क्रान्तिकारी पैदा कर सके हों । और यही कारण है कि भारत में कोई क्रान्ति नहीं हो सकी है । हिन्दू का हर कर्म ब्राह्मणवाद के सिद्धान्तों में पूरी तरह डूबे रहने, उसके संघर्षमयी एवं विरोधी-तत्वो से लगाव और उलझन में डाल देने वाले टकराव का परिणाम होता है । ब्रह्म सूत्रों ने आत्मा के सम्बन्ध में प्रस्तुत जैन दृष्टिकोण को इसलिए रद्द कर दिया क्योंकि यह विचार विरोधाभास से ग्रस्त था । परन्तु ब्राह्मणवाद के किसी भी दृष्टिकोण को रद्द नहीं किया जा सकता । उनमें चाहे जितने विरोधाभास हों । क्यों? क्योंकि ब्राह्मण की हर बात ठीक होती है । कौन कहता है कि वह ठीक है ? ऐसा कहने वाला ब्राह्मण है – भूदेवता ! जो इस बात पर शक करता है या इस पर प्रश्न करता है उसकी हँसी उडाई जाती है; और यदि वह ब्राह्मण की पूछ-ताछ करने का आग्रह करता है तो उसका काम तमाम कर दिया जाता है ।

"परन्तु चिढ का विषय यह है कि यदि कोई ब्राह्मण साहित्य का पर्दाफ़ाश करने का प्रयत्न करता है तो ब्राह्मण विद्वान असहिष्णुता का अवतार बन जाते हैं । कहीं आवश्यकता पडने पर भी वह खुद एक मूर्तिभंजक की भूमिका अदा नहीं करता । और यदि कोई ब्राह्मणेतर यह भूमिका अदा करने की क्षमता रखता भी हो तो ब्राह्मण उसे ऐसा करने से रोकता है । यदि कोई ब्राह्मणेतर इसका प्रयत्न करता है तो ब्राह्मण विद्वान उसका मुँह बंद करने के षड्यन्त्रों में लग जाते हैं, उसकी उपेक्षा करते हैं, छोटी-सी बातों को आधार बना कर कठोर शब्दों में खण्डन करते हैं या उसके कार्य को बकवास घोषित कर देते हैं । एक लेखक होते हुए ब्राह्मण साहित्य का पर्दाफाश करने के कार्य में लगे रहने पर मैं खुद उनके नीच षड्यन्त्रों का शिकार बना हूँ । " (डा. अम्बेडकर – द अनटचबल्स - पृष्ठ - xii, भारतीय बौद्ध शिक्षा परिषद, श्रावस्ती 1977 - 12 रूपये)

महोपनिषद (11 - 74 - 77) संदेह करने वालों को 'कचरा' (कूडा) घोषित करता है। मुक्ति उसके लिए सुरक्षित है जो संदेह का निवारण करता है । मैत्रेयोपनिषद (2 - 17) भी विश्वास पर ज़ोर देता है, ग्रन्थों पर प्रश्न करने वालों का खण्डन करता है और संदेह करने वालों के विनाश की भविष्यवाणी (पेशनगोई) करता है ।

गुरू उपासना – विधि

इतना सब कहने के बाद ब्राह्मण प्रभुत्व को स्थिर बनाये रखने के लिए एक अनोखी संस्था की स्थापना की गई है, जिसका नाम 'गुरु उपासना - विधि है । ब्राह्मणवाद कहता है कि बिना गुरु से दीक्षा प्राप्त किये कोई भी व्यक्ति धर्म-ग्रन्थों से ज्ञान पाने का अधिकार नहीं रखता, और वह 'गुरू' केवल एक ब्राह्मण ही हो सकता है । याद रखिए, वह 'गुरु' भगवान से श्रेष्ठ होता है । गुरु की सहायता के बिना किसी को धर्म-ग्रन्थ पढने का अधिकार नहीं है । हम से कहा गया है कि वह 'गुरु' भगवान का अवतार होता है ।.

शास्त्र हिन्दुओं को इस बात की इजाज़त नहीं देते कि ब्राह्मण के अतिरिक्त इच्छानुसार किसी और को अपना गुरू नियुक्त करे, चाहे वह कितना ही प्रकाण्ड विद्वान क्यों न हो और सारे ग्रन्थों का मौखिक पाठ ही क्यों न करता हो । इस बात का स्पष्टीकरण रमादास जैसे कई ब्राह्मण संतों ने किया है । आर.एस.एस. रमादास को दोष देती है कि उन्होंने शिवाजी को हिन्दू - राज स्थापित करने की प्रेरणा दी थी । डा. अम्बेडकर (अन्नीहिलेशन ऑफ कास्ट) में उल्लेख करते हैं कि रमादास जो एक मराठी ब्राह्मण था, ने स्पष्ट रूप से इस बात की मनाही की है कि किसी अछूत को गुरू के रूप में स्वीकार किया ही नहीं जा सकता चाहे वह कितना ही महान संस्कृत ज्ञानी पण्डित क्यों न हो । इस प्रकार गुरू के पद की पूर्ण सुरक्षा की गई है । यहाँ ज्ञान के बल पर कोई गुरू नहीं बन जाता, बल्कि जाति ही इसका निर्णायक तत्व है ।

गुरू नामक व्यवस्था के आविष्कार का उद्देश्य ब्राह्मण प्रभुत्व को स्थायी बनाये रखना है । यह अनोखी व्यवस्था ब्राह्मण राजशाही के सिलसिले को चलाये रखने का आश्वासन देती है । और इस व्यवस्था को पर्दाफ़ाश होने के खतरे से बचाये रखने के लिए हर प्रकार की सावधानी बरती जाती है । गुरू को दृढ रूप से सावधान किया जाता है कि वह किसी नास्तिक, हेतुवादी या म्लेच्छ से बात न करे । ब्राह्मणवाद की श्रेष्ठता पर प्रश्न करने वाले से बहस न करे, उसे मार डाले । मतभेद रखने वाले पर किसी प्रकार की दया न करें । 'चरवका' पर की गई गालियों की बौछार देखिए — 'अतः क्या यह सिद्धान्त खुद को स्थायी बना सकता है, अतः क्या यह खुद को हेतुवादी प्रश्नों की पहुँच से दूर रख सकता है, अतः क्या ब्राह्मणवाद यह विश्वास दिला सकता है कि केवल वही लोग इसका ज्ञान प्राप्त करेंगे जो संदेह से मुक्त हो चुके हैं, अतः क्या वह विश्वास दिला सकता है कि जिन्हों ने यह ज्ञान प्राप्त किया वे उसे पूरी तरह स्वीकार कर सकेंगे ? (अरुण शौरी – पृष्ठ 359)।

अतः यह स्पष्ट हो जाता है कि हिन्दू कभी सीधे और हेतुवादी हो ही नहीं सकते । ब्राह्मणवाद और हेतुवाद एक साथ चल ही नहीं सकते । 'एक व्यक्ति या तो हिन्दू बन सकता है या साम्यवादी । वह एक साथ दो भी नहीं हो सकता । ' (एम.एस. गोलवालकर, बंच ऑफ थाट्स – पृष्ठ - 53)।

इतना सब होने पर भी ब्राह्मणवाद को संसार का अत्यन्त सहनशील धर्म कहा जाता है जो सब को अपनी छत्रछाया में सुरक्षा प्रदान करता है । क्या इससे बडा झूठ कोई और हो सकता है ? ब्राह्मणवाद केवल उसी हद तक सहनशील है जहाँ तक उसे विभिन्नतापूर्ण व्याख्या करने का महत्व प्राप्त है, परन्तु जो भी इस विचार - धारा पर टीका करता है उसे निर्दयता के साथ कुचल दिया जाता है । देखिए न गौतम बुद्ध, बसवण्णा, गुरू नानक, राजाराम मोहन रॉय, नारायण गुरू आदि का क्या हाल हुआ । 'रामायण में राम से क़हलवाया गया कि गौतम बुद्ध एक चोर है, तथागत नास्तिक है । इसी लिए एक बुद्धिमान व्यक्ति को चाहिए कि वह उस नास्तिक की ओर न झुकने का प्रयल करे (सी.वी. वैद्या – एपिक इण्डिया पृष्ठ - 377) ।

गाँधी तक एक ब्राह्मण के हाथों मारा गया । अम्बेडकर तथा पेरीयार की हत्या करने के लिए कितने सारे प्रयल किये नहीं गये ? ऐसे सम्प्रदाय या समाज को सहनशील कैसे कहा जा सकता है ?

पागल कुत्ते

'यह बात मेरी समझ में नहीं आई कि ये विनम्र व अहिंसक प्रतीत होनेवाले हिन्दू अपने धर्म-ग्रन्थों पर किसी के आक्रमण करने से किस तरह हिंसक बन सकते हैं । इस बात का परिचय मुझे पिछले साल मिला जिसका अनुभव पहले कभी नहीं हुआ था । पिछले वर्ष मुझ पर क्रोधी हिन्दुओं के पत्रों की जैसे वर्षा सी हो गई । मद्रास में दिये गये मेरे भाषण के विषय पर ये हिन्दू जैसे अपना मानसिक संतुलन खो बैठे । ये पत्र ऐसी गंदी गंदी गालियों से भरे हुए थे जिनको न कहा जा सकता है, न ही छापा जा सकता है । इसके अलावा मुझे जान से मार डालने की खतरनाक धमकियाँ भी दी गई थीं । पिछली बार उसे मेरा प्रथम अपराध समझकर केवल धमकियाँ देकर मुझे छोड दिया गया । पता नहीं इस बार क्या करेंगे। कारण यह कि, इस पुस्तक को पढने पर उनको क्रोधित होने के लिए अधिक कारण मिल जाएँगे । क्योंकि इस बार न केवल मैंने अपराध को दोहराया है बल्कि इसे और अधिक धोर और अक्षम्य बना दिया है । क्यों कि मैं ने विशेष परिच्छेदों तथा श्लोकों को लेकर यह दिखाया है कि धर्म-ग्रन्थों के नाम मे झूठी बातों को लेकर जिनका उद्देश्य राजनीतिक है, जिसकी बनावट पक्षपाती है तथा जिनका उद्देश्य छल-कपट है, एक जाल बुना गया है । मैं उनकी धमकियों तथा चरित्रवध की चेष्टाओं पर ध्यान नहीं देना चाहता । क्योंकि मैं जानता हूँ कि वे अत्यन्त नीच लोग हैं जिन्होंने धर्म-रक्षा के बहाने धर्म को एक व्यापार बना लिया है। वे संसार के सबसे स्वार्थी लोग हैं जो अपने वर्ग तथा जाति के ग़लत लाभ के लिए अपनी बुद्धि का व्यभिचार करते हैं । यह कोई असाधारण और आश्चर्य की बात नहीं है कि जब कोई हिन्दुओं के पवित्र ग्रन्थों के विरोध में आवाज उठाने का साहस करता है तब ऐसे धर्मपरायण पागल कुत्तों को उसके पीछे लगा दिया जाता है । ऊँचे पदों पर बैठे हुए विशिष्ठ हिन्दू जो खुद के उच्च शिक्षित होने का दावा करते हैं, जिनके बारे में समझा जाता है कि इनका कोई स्वार्थ नहीं होता, जिनका मन विशाल होता है, एकदम पक्षपाती बनकर उन

पागल कुत्तों के साथ मिल जाते हैं । यहाँ तक कि उच्च न्यायालय के हिन्दू न्यायाधीश और भारत के प्रान्तीय मुख्य मन्त्री एवं प्रधानमन्त्री तक अपनी जाति की टोली के साथ हो जाते हैं । बल्कि ये लोग उनसे भी आगे निकल जाते हैं । वे न केवल उस व्यक्ति के विरुद्ध भौंकने का नेतृत्व करते हैं अपितु उस विद्रोही के शिकार पर भी निकल पडते हैं । यह सब से बडा अत्याचार है कि उनके ऐसा करने का कारण उनका यह विश्वास है कि उनके ऊँचे पद उनके शब्दों में इतना आतंक भर देते हैं कि वे धर्मपरायणता के हर विरोधी को झुकाने के लिए काफ़ी होते हैं । वे अपने पद और सत्ता को अपने विरोधी को कुचल डालने के लिए इस्तेमाल करते हैं । मैं इन प्रियजनों से यह कहना चाहता हूँ कि मुझे इनकी गालियाँ और शाप अपने काम से रोक नहीं सकते । लगता है कि वे डॉ. जॉनसन के इन अत्यन्त गम्भीर तथा प्रभाशाली शब्दों से अवगत नहीं हैं -- 'मुझे किसी भी गुण्डे की धमकियाँ, एक छली व कपटी को पकडने से नहीं रोक सकतीं ।' मैं इन उच्च पद वाले आलोचकों के लिए कडे शब्द बोलना नहीं चाहता । बस इतना ही कहना चाहता हूँ कि वे एक ऐसे गुण्डे का खेल खेल रहे हैं जिसका उद्देश्य धोखाबाज़ को निकल जाने में सहायता देना है । परन्तु मैं उनको दो बातें अवश्य कहना चाहता हूँ; प्रथम बात यह कि चाहे कुछ भी हो जाये मैं डा. जॉनसन की दृढता का अनुकरण करते हुए पवित्र-ग्रन्थों का पर्दाफाश करके ऐतिहासिक सच को खोज निकालने का अनवरत प्रयास करूँगा ताकि हिन्दू जान सकें कि इस देश और समाज की अवनति का कारण उनके पवित्र ग्रन्थों में उपस्थित शिक्षा एवं सिद्धान्त हैं, दूसरी बात यह है कि यदि इस पीढी के हिन्दू मेरी कही जाने वाली बातों पर ध्यान नहीं देंगे तो आने वाली पीढियाँ जरूर देंगी । मैं अपनी सफलता से निराश नहीं हूँ । क्योंकि मुझे कवि भावभूति के इन शब्दों से आश्वासन मिलता है - 'समय अपरिमित है और पृथ्वी विशाल, किसी दिन ऐसा व्यक्ति पैदा होगा जो मेरे कथन की प्रशंसा करेगा ।' (डा. अम्बेडकर, 'हू वेर द शूद्रास' थ्याकर्स1970 - पृष्ठ xviii से xviii तक) ।

क्या धर्मपरायणता के इन पागल कुत्तों को किसी भी समय सहनशील कहा जा सकता है ? एक सामाजिक व्यवस्था को जिसने अधिकांश सामान्य जनता को अपूर्व क्रूरता का निशाना बनाया गया हो, सहनशील कैसे कहा जा सकता है ? अपने विचारों से सहमत न होने वालों को पिशाचग्रस्त कहने वालों को सहनशील कैसे कह सकते हैं ?

इन दोषारोपणों का विरोध करने के लिए ब्राह्मण तुरन्त कुछ नुमाइशी व्यक्तियों को - सर्कस के किसी जोकर या मसखरे को बाहर निकालते हैं - - - अर्थात् ऐसे शूद्र जिन्होंने जीवन में कोई उच्चतम पद प्राप्त किये हैं । ब्राह्मण हमसे पूछते हैं कि यदि हिन्दूवाद सहनशील न होता तो ये शूद्र ऐसे उच्चतम पद शिखरों को कैसे पा सकते थे । जरा देखें, ब्राह्मणत्व प्राप्त करने वाले ये शूद्र कौन हैं : स्वामी विवेकानन्द, सत्य साई बाबा, स्वामी चिन्मयानन्द । ऐसे और भी असंख्य प्रदर्शन के नमूने हैं । यदि हम सूक्ष्मता और सावधानी से उनकी जाँच करें तो पता चलेगा कि वे अपने स्वामियों से भी अधिक वफ़ादार हिन्दू हैं । "इससे भी जरूरी बात यह है कि जिस एकाध शूद्र को हिन्दू-सिद्धान्त की पोथी में आदरणीय स्थान मिलता है, वह ऐसा व्यक्ति है जिसने इस सिद्धान्त को अपने कण-कण में बसा लिया

है, जो वस्तव में अध्यात्मिक और मानसिक रूप से ब्राह्मण बन गया होता है । इन अतिरिक्त व्यक्तियों को जाँचने के बाद यह पता चलता है कि यह ब्राह्मणों की सहनशीलता नहीं बल्कि चुने-चुने लोगों की नियुक्ति है, हम जिसे कार्योन्मुख देख रहे हैं वह मतभेद को सहने वाला समाज नहीं बल्कि उन प्रमुखों को चुन-चुन कर नियुक्त कर लेना है जो आगे चलकर ब्राह्मणों का विरोध कर सकते हैं । (अरुण शौरी) - पृष्ठ - 363) इसे कहते है "वैयक्तिक मोक्ष । ब्राह्मणों की नकल करके एक शूद्र अथवा अतिशूद्र जाति की सीढी के ऊपर तक पहुँच सकता है । परन्तु सामूहिक मुक्ति को सहन नहीं किया जाता ।

संस्कृतीकरण, पाश्चात्यीकरण तथा उद्योगीकरण ने केवल ब्राह्मणवाद को प्रबल बनाया है । ब्राह्मणवाद के इन रंगरोटों ने ब्राह्मणी चमड़ी को एक बाहरी कवच दिया है । ये नये-ब्राह्मण वास्तविक ब्राह्मणों से अधिक खतरनाक हैं । ब्राह्मण-शक्तियों को आजकल पुष्ट व प्रबल करने वाले भारतीय मार्कसवादी हैं । और हमारे मार्क्सवादियों से बढकर ब्राह्मणवाद की वकालत किसी ने नहीं की है । दरअसल ब्राह्मणवाद से वफ़ादारी दिखाने में ये लोग धर्मपरायण ब्राह्मणों से भी चार कदम आगे रहते हैं । मार्क्सवादी ब्राह्मण, आर.एस.एस. के ब्राह्मणों से भी ज्यादा खतरनाक साबित हुए हैं ।

हज़ारों वर्ष पूर्व ब्राह्मणवाद ने संसार के सर्वश्रेष्ठ, महान मुक्तिदायक, मानवतावादी सिद्धान्त बौद्ध-धर्म को नष्ट कर डाला था । उस दिन से आज तक भारत की यही दशा रही है । चूँकि ब्राह्मण, जाति के सूच्याकार शिखर पर बिरजमान थे, इसलिए हर एक चीज़ उनके अधीन रहने के फलस्वरूप उनको किसी समस्या का सामना नहीं करना पडा । और उनको प्राप्त ढेर-सारा फाल्तु समय कल्पनाओं की सृष्टि में बिताया गया । एक आलसी दिमाग ने शैतान का कारखाना बनकर 'पवित्र ग्रन्थों' का एक जंगल ही उत्पन्न कर दिया जो हमारी सारी मुसीबतों का कारण बने और भारत को 'भिखारी राष्ट्र' की गति को पहुँचा दिया । कैसे मज़े की बात है कि सारे राष्ट्र ने अपने दिमागों को ब्राह्मणों की कैद की सुरक्षा में दे रखा है एक शासक-वर्ग को इससे बढकर और क्या चाहिए जब उसके शासित जनों ने सोचने का सारा अधिकार उनको सौंप रखा हो । उनके सोचने का काम ब्राह्मण करेंगे । हिन्दू भारत एक विशाल बौद्धिक बंजर-भूमि बना हुआ है । इस धर्म-भूमि व पवित्र-भूमि में किसी को, किसी भी बात पर क्रोध नहीं आता क्योंकि उनके दिमाग ब्राह्मणों के पास सुरक्षित रखे हुए हैं । हिन्दुओं का यह एक अनिवार्य गुण है कि बिना-प्रश्न किये सब उसके अधिकार का पालन करें जिसके कारण भारत 'संसार का रोगग्रस्त व्यक्ति' बना हुआ है । और भारत के इस 'यशस्वी सांस्कृतिक विरासत' का समर्थन करते हुए ब्राह्मण इसे तोते की तरह रटते रहते हैं ।

हमारी इस नीच अवस्था का एकमात्र कारण ब्राह्मणवाद ही है । ब्राह्मणीय राजशाही के अधीन रहकर भारत तीसरी दुनिया में था । परन्तु जब संसार के दूसरे राष्ट्र कमज़मक धीरे-धीरे आगे बढने में समर्थ रहे तो भारत गहरी से गहरी खाई में धंसता चला

गया । आज हालत यह है कि भारत तीसरी दुनियाँ से फिसल कर चौथी दुनियाँ में पहुँच गया है । ब्राह्मणवाद, ज़िन्दाबाद !!!

ब्राह्मणवाद - विरोध, एक कार्यतन्त्र के रूप में : -

हो सकता है ब्राह्मण-विरोध एक पूर्ण, व क्रमबद्ध कार्य-नीति न हो, परन्तु यह एक शक्तिशाली विचारधारा है जो पहले और आज भी भारत के लाखों न केवल हिन्दुओं को बल्कि दूसरे लोगों को भी विचलित करती रही है । चूँकि कुछ शहरों में पले लोग इस अत्यन्त शक्तिशाली स्वदेशोत्पन्न कार्य-नीति के महत्व व ज़रूरत की प्रशंसा नहीं करते, यहाँ इस कार्य-नीति के विभिन्न पक्षों के विश्लेषण का प्रयास किया गया है । ब्राह्मणवाद जैसे एक नकारात्मक सामान्य विचार किस प्रकार एक कार्य-नीति व विचार-धारा बन सकती है ? इसका वर्णन इस शीर्षक से इसलिए किया गया है क्यों कि इसके लिए कोई निर्दिष्ट नाम नहीं मिल सका है । जब ब्राह्मणवाद एक विचार-धारा बन सकता है तो फिर ब्राह्मणवाद-विरोध एक विचार-धारा बन सकता है तो फिर ब्राह्मणवाद-विरोध भी एक विचार-धारा क्यों न बने? इतना कहना काफ़ी होगा कि, ब्राह्मणों और उनसे निम्न वर्गीय ब्राह्मणेतरों द्वारा पीडित व शोषित लोग इस ब्राह्मण प्रभुत्व के विरुद्ध विद्रोह करते रहे और करते ही जा रहे हैं । इस विद्रोह ने भारतीय समाज तथा राजनीति को ढालने में महान भूमिका अदा की है । अतः भारत में सदियों से हाने वाले सारे विरोधी आन्दोलनों में ब्राह्मणवाद-विरोधी आन्दोलन सदा केन्द्रीय विषय रहा हैं ; आर्यों के भारत पर आक्रमण करने के दिन ही से ऐसे आन्दोलन चलते रहे हैं । जो भी हो, ब्राह्मणवाद-विरोध को केवल ब्राह्मणों के विरुद्ध विद्रोह करने तक ही सीमित नहीं रखा जा सकता । हमें उन ब्राह्मणेतरों के विरुद्ध भी उठ खडा होना है जो ब्राह्मणवाद की मूल्य-नीति को योगदान देतें हैं । अतः ब्राह्मणवाद, ब्राह्मणों से भी अधिक खतरनाक होता है । कारण यह कि स्वयं ब्राह्मण इस ब्राह्मणवाद का शिकार होते रहे हैं । ब्राह्मणवाद के अत्यन्त कट्टर शत्रु गौतम बुद्ध, बसवेश्वर, गुरू नानक, राजाराम मोहन रॉय, दयानन्द सरस्वती से लेकर महात्मा फुले, नारायण गुरू, अम्बेडकर, लोहिया और पेरीयार ई.वी. रामस्वामी तक सब के सब ब्राह्मणवाद के विरुद्ध प्रचण्ड रूप से धर्मयुद्ध करने वाले भारत के प्रथम श्रेणी के मानवतावादी थे । इस प्रकार हम इस फैसले पर पहुँच सकते हैं कि भारत की विभिन्न धर्मनिरपेक्ष विचार-धाराओं में ब्राह्मणवाद-विरोध एक अत्यन्त स्वदेशोत्पन्न नीति रही है । सामाजिक या राजनीतिक नेता इस विचार - धारा से उदासीनता केवल अपनी बरबादी की कीमत पर ही कर सकते हैं । ब्राह्मणवाद-विरोध को प्रखर बनाने वाली वस्तु जाति-पद्धति है जो भारत का एक विशिष्ट अद्‌भुत है । जाति, हिन्दूवाद का एक अभिशाप है जो आदर के नाप से ऊपर चढ़ता जाता है और तिरस्कार के नाप से नीचे गिरता जाता है । ब्राह्मणवाद - विरोध का यह विश्वास है कि ब्राह्मण को जाति के मुण्डाकार स्तम्भ के शिखर पर अनन्त रूप से बिठाये रखने वाला जाति-प्रथा का ढाँचा ही भारत में शोषण, अमानुषता और दासता का मूल कारण है । ब्राह्मण प्रभुत्व को धर्म का अनुमोदन प्राप्त है और ब्राह्मणों की खानदानी पुरोहिती ब्राह्मणवाद को स्थिर बनाये रखने का केन्द्र पात्र अदा करती है । अतः ब्राह्मण-विरोध 'पवित्र-ग्रन्थों', जाति-पद्धति और पुरोहित शाही, इन

तीन मुख्य संस्थाओं को नाश कर देने की आवाज देता है । ब्राह्मणवाद - विरोध विचार - धारा का सार ही, यह है ।

ब्राह्मण के साथ-साथ हर हिन्दू ब्राह्मणवाद का शिकार बन गया है; विशेषकर अछूत, जिनमें से अनेकों ने इसके प्रजापीडन से बचने के लिए दूसरे धर्मों की शरण ले ली । ब्राह्मणी स्त्रियाँ सहित हिन्दू स्त्रियाँ ब्राह्मणवाद की अमानुषता को मूक होकर सहती रही है। हिन्दूवाद के दो महान स्तम्भ विवेकानन्द और गाँधी तक ब्राह्मणवाद द्वारा किये जाने वाले इन अत्याचारों के विरुद्ध बोलने पर विवश हो गये । एम.एन. रॉय और नेहरू जैसे ब्राह्मणों ने तक ब्राह्मणवाद-विरोध का समर्थन किया । उनका कहना था कि 'ब्राह्मणवाद तथा जनतंत्र एक साथ पनप नहीं सकते । इस तरह 2500 वर्ष पूर्व वाले जैनवादी आन्दोलन काल से लेकर आज तक भारत के हर एक आन्दोलन, चाहे वह सामाजिक व सांस्कृतिक रहा हो या राजनीतिक, में ब्राह्मणवाद-विरोध की प्रबलतम कार्य-नीति अपना काम सफलतापूर्वक करती रही है । प्रत्येक राजनीतिक दल को इस ने हिलाकर रख दिया है । इस विचार-धारा ने मार्क्सवादी पक्षों को तक नहीं बख्शा और यह टूट-टूट कर उपपक्षों में बँट गई, कारण यह कि भारतीय मार्क्सवादियों ने इसकी खींच-तान पर ध्यान नहीं दिया । महाराष्ट्र के महात्मा फुले को वर्तमान के ब्राह्मणवाद-विरोध का जन्मदाता माना जाता है । उन्होंने ब्राह्मणवाद - विरोध विचार धारा पर अनेक पुस्तकें लिखीं और सत्य शोध आन्दोलन जैसे शक्तिशाली आन्दोलन की स्थापना की । उनके अनुसार मनुस्मृति पवित्र नहीं बल्कि एक अपवित्र पुस्तक है । डॉ. अम्बेडकर को जो एक अछूत थे, मुख्यतः महात्मा फुले ही से प्रेरणा मिली जो एक पिछडी 'बाग़बान' या 'माली' जाति से थे । तमिल लोगों के अपनी द्राविडी पहचान (शनाखत) को सिद्ध करने के लिए चालाये गये प्रबल सामाजिक, सांस्कृतिक एवं राजनीतिक आन्दोलन इसी ब्राह्मणवाद-विरोध कार्य-नीति के कारणस्वरूप थे । पेरीयार ई.वी. रामस्वामी ने 1944 में द्राविड गलगम की स्थापना की भी और 1949 में बनी अण्णा दोराई की द्राविडा मुनेत्रा कलगम उसी डी.के. की शाखा थी । ई.वी. रामस्वामी इसी विचार-धारा में सुधार लाकर हिन्दू देवताओं एवं स्वयं हिन्दू धर्म का उपहास करने लगे । उन्होंने कहा कि ब्राह्मणों द्वारा हिन्दूवाद जिसका ठीक नाम ब्राह्मणवाद है की स्थापना गरीब, अशिक्षित एवं अज्ञानी जनता के शोषण के लिए की गई । पेरियार का मूल कार्यक्रम ब्राह्मणों के पुरोहिती कार्य पर निषेध लगाना था । अम्बेडकर भी तद्रूपी विचार-धारा का ही अनुकरण करते हैं । वे कहते हैं कि जातिवाद लोगों को मुर्दा, लक़वाग्रस्त एवं अपाहिज बना देता है । इसने हिन्दू समाज को नष्ट, आचार भ्रष्ट और निर्जीव बना दिया है । आधुनिक भारत के सर्वश्रेष्ठ विचारकों एवं दार्शनिकों में से एक मानेजाने वाले डा. अम्बेडकर अपनी असंख्य पुस्तकों में आवाज़ दी है कि प्रत्येक स्त्री पुरुष को इन पवित्र ग्रन्थों की दासता से मुक्ति दिलायी जाय । साथ ही उन्होंने घोषित किया है कि ब्राह्मणवाद का वास्तविक खलनायक पुरोहित है । अम्बेडकर तथा ई.वी. रामस्वामी दोनों ने ब्राह्मणवाद को प्रतिकार पूर्ण विचार - धारा की संज्ञा दी है । ब्राह्मण-विरोध ने अब तक क्या प्राप्ति की ? आर्यों के अक्रमण से पहले वाले शानदार सांस्कृतिक एवं सामाजिक रिवाजों को पुनर्जीवित करके इसने उन्हें अपना वर्गमूल तथा अपनी शनाखत (पहचान) एवं आत्मसम्मान को जानने में सहायता दी । फुले,

अम्बेडकर तथा ई.वी. रामस्वामी ने कहा कि आर्यों के आक्रमण से पहले शूद्र, अतिशूद्र तथा कबायली लोग ही भारत के मौलिक निवासी थे । उनके पास इस बात को सिद्ध करने के लिए काफ़ी ऐतिहासिक प्रमाण थे ।

ई.एफ. इरशिक कहते हैं कि तमिलनाडू में ब्राह्मणों को अजनबी अथवा विदेशी कहकर खण्डित किया जाता है और खण्डन के इस सुलभ हथियार से वे ब्राह्मणों की पिटाई करते हैं । परन्तु अपने द्राविडी मूल से होने की लोकप्रियता ने भी तमिल ब्राह्मणेतरों को एक शनाखत और आत्मगौरव प्रदान किया । इस बात का प्रमाण भी मिल चुका है कि आर्यों के आक्रमण से पहले तमिल समाज मूर्ति-पूजा और जाति-पद्धति से मुक्त था । सिन्धू घाटी सभ्यता ने निश्चित रूप से यह सिद्ध कर दिया है कि भारतीय संस्कृति के अत्यन्त महत्वपूर्ण निर्माताओं में सर्व प्रथम आर्य नहीं थे । फादर हेरास कहते हैं कि तमिल लोग सिन्धू-घाटी सभ्यता के शुद्धतम वंशज थे । ब्राह्मणवाद एक जाति-परिवर्तन प्रिय धर्म होने के कारण उसने जैनों और बौद्धों का अमानुष उत्पीडन करके उनको फिर से हिन्दूवाद को परिवर्तित कर लिया । गौतम बुद्ध के देहावसान के बाद ब्राह्मणवाद को हिन्दूवाद नामक नया नाम दिया गया था । कई इतिहासकारों ने जैनों और बौद्धों की हत्या एवं दारुण अत्याचारों का वर्णन किया है । द्राविड कलगम एवं द्राविड मुनेत्रा कलगम की "तमिलनाडू, तमिलों के लिए" घोषणा के पीछे यही दृढ विश्वास छिपा हुआ है कि आर्य विदेशी हैं तथा द्राविड ग़ैरब्राह्मण लोग हैं । इस प्रकार ब्राह्मण-विरोध ने एक नई जागृति लाई है, ब्राह्मणेतरों में एक नया आत्माभिमान लाया है और इसने उनको विश्वास दिलाया है कि उनकी दरिद्रता और वेदनाओं का कारण ब्राह्मणवाद है । सामाजिक क्रान्ति पर ज़ोर दिया गया है, उसके महत्व ने ब्राह्मणों के हाथों हो रहे शेषण का उनको पूर्ण ज्ञान दे दिया। इतना ही नहीं, कई ब्राह्मणेतरों को ब्राह्मणशासन की-अपेक्षा, अंग्रेजी शासन ही प्रिय था । अम्बेडकर और ई.वी. रामस्वामी दोनों ने ऐसा कहा था । वह यही ब्राह्मणवाद-विरोध था जिसने ई.वी. आर को कांग्रेस छोडने पर विवश कर दिया और उन्होंने उसी के कारण "आत्म सम्मान आन्दोलन" की स्थापना की । तत्पश्चात उन्होंने पृथक द्राविडिस्तान के लिए संघर्ष छेडा । ई.वी. आर ने कहा, "यह तथा कथित राष्ट्रवाद, ब्राह्मणवाद का ही एक और रूप है।" आर.एस.एस. एवं जनसंघ (वर्तमान बी.जे.पी) की वृद्धि ने उनके आतंक को प्रमाणित कर दिया है । लोहिया ने हिन्दी प्रदेशों में ब्राह्मणवाद विरोध को फैलाने में महान योगदान दिया है । आज भारत के सारे लोहियावादी ब्राह्मणवाद - विरोध के सेनामुख में डटे हुए हैं । यह याद रखने की बात है कि ब्राह्मणवाद - विरोधी सारे नेता भारतीय बाएँ बाजू के आन्दोलन से टकरा बैठे क्योंकि उसने अपने आन्दोलन के मूल-सिद्धान्तों व विचारधारा की उपेक्षा कर डाली । उन सब नेताओं ने चेतावनी दी कि मार्क्सवाद जो एक विदेशी फलसफ़ा है भारत में तब तक जडें नहीं जमा सकता जब तक कि वह ब्राह्मणवाद एवं उसके तीन स्तंभों पर आक्रमण नहीं करता । अम्बेडकर ने कहा कि ब्राह्णवाद और पूंजीवाद दोनों श्रमिकों के जुडवाँ शत्रु हैं, इसलिए दोनों पर एकसाथ आक्रमण करना चाहिए । भारत के एकमात्र लेनिन पुरस्कार विजेता डाँगे तथा कम्यूनिस्ट पक्ष के अन्य नियंत्रकों की आलोचना करते हुए उनको 'ब्राह्मण लौंडों की एक टोली' का नाम दिया । ई.वी. रामस्वामी भी

कम्यूनिस्ट पक्ष पर ब्राह्मणों के प्रभुत्व की आलोचना करते थे । लोहिया के भी यही विचार थे । चूँकि भारत का मूल विरोधी-तत्व जाति है, इसलिए इसे मिटाना ही हमारा सर्वप्रथम प्रयत्न होना चाहिए । ब्राह्मणवाद-विरोध का सबसे बडा ज़ोर शिक्षा पर दिया गया । महात्मा फुले और अम्बेडकर ने निम्न जातियों में शिक्षा अभियोग चलाया जिसकी पुस्तकों में ब्राह्मणवाद-विरोध पर जोर दिया गया । अम्बेडकर ने शिक्षासंस्थाओं की श्रृंखला ही खोल रखी थी । फुले और अम्बेडकर ने रामायण और महाभारत आदि पुराणा में ब्राह्मणवाद-विरोधी व्याख्याओं को शामिल किया । इन की व्याख्या इस प्रकार की गई की वे पुराण ब्राह्मणों और ब्राह्मणेतरों के बीच संग्राम की कहानियाँ थीं । ब्राह्मणवाद का ज़हर फैलाने वाली गीता एवं मनुस्मृति को जलाना लोकप्रिय बन गया । 1927 में अम्बेडकर ने सार्वजनिक रूप से मनुस्मृति को जलाया । पेरीयार ने मन्दिरों में घुस कर मूर्तियों को तोड डाला, धर्म-ग्रंथ जला डाले, होटेलों के ब्राह्मण नाम-फलकों पर तारकोल पोत डाला, ब्राह्मणों की चोटियाँ काट डालीं । उनका सबसे लोकप्रिय कार्यक्रम जो आगे चलकर एक जन-आन्दोलन बन गया, 'आत्मसम्मान युक्त विवाह' था ; जो पुरोहितों को निकाल फेंकता है। उन्होंने एक छापाखाना और प्रकाशन-भवन की स्थापना भी की । इस प्रकार पेरीयार का नाम ब्राह्मणवाद-विरोध के श्रेष्ठतम स्तम्भ के रूप में इतिहास में अंकित रहेगा । दुर्भाग्यवश उनका हेतुवादी धर्मयुद्ध केवल तमिल नाडू तक ही सीमित रह गया क्योंकि वे तमिल के अतिरिक्त और कोई भाषा नहीं जानते थे । ब्राह्मण-विरोध के पीछे कौन सी प्रेणा छिपी है? समानता की खोज एवं मानवीय सम्मान । हो सकता है ब्राह्मणेतर लोगों ने इन चीज़ों को सन्तोषजनक हद तक प्राप्त न किया हो, परन्तु, कमज़कम सारे दिक्षिण भारत और महाराष्ट्र के राजनीतिक अधिकार से ब्राह्मणों को दूर भगाने में सफल रहे हैं । इन प्रान्तों पर ब्राह्मणवाद - विरोध का बड़ा भयंकर प्रभाव रहा है । अम्बेडकर ने धर्म का पूर्ण रूप से बहिष्कार नहीं कर दिया था । उन्होंने बौद्ध धर्म को गले लगा लिया । परंतु पेरियार एक योद्धा नास्तिक थे। उनके लिए धर्म परिवर्तन कोई हल नहीं था । अम्बेडकर हिन्दूवाद में सुधार चाहते थे जबकि परियार उसके विनाश की आवाज़ दी । इसलिए उनको भारत के सर्वप्रथम व सर्वश्रेष्ठ हेतुवादी के नाम से सम्मानित किया गया क्यों कि वे न केवल अछूतों के बल्कि अन्य धर्मावलम्बियों के दिलों को भी जीतने में समर्थ रहे । यह और बात है कि आगे चलकर इनके अनुयायी राजीनीतिक सत्ता के लालच से परास्त होकर धीरे-धीरे ब्राह्मणवाद के साथ समझौता करते हुए ब्राह्मणों के हाथ की कठपुतली बन गये । पेरियार ने दृढतापूर्वक चेतावनी दी थी कि द्राविडी आन्दोलन के कार्यकलाप केवल सांस्कृतिक एवं सामाजिक विषयों तक ही सीमित रहें और चुनावों वाली राजनीति में भूलकर भी न जायें । उनके अनुयाइयों ने इस उपदेश पर ध्यान नहीं दिया और परिणाम स्वरूप ब्राह्मणवाद से पराजित होकर तमिलनाडू को ब्राह्मणों के हाथ वापिस सौंपने ही वाले हैं । भारत की डूबती हुई ज़नता को उबारने में जितनी सहायता ब्राह्मणवाद-विरोध नीति ने की है उतनी सहायता कोई और कार्य-नीति नहीं कर सकी । यदि दक्षिण भारत की जनता अपने उत्तर भारतीय प्रतिरूपी भाइयों से - - - अधिक जानकारी रखती है, एवं अधिक प्रगतिशील व लडाकू है तो इसका श्रेय उसी कार्य-नीति को जाता है ।

इसका प्रभाव मार्क्सवाद के अतिरिक्त सभी कार्य-नीतियों पर पडा है । भारत के सर्वोच्च मार्क्सवादी ई.एम.एस. नम्बूदरिपद ने स्वयं अपने एक लेख में इसे स्वीकार किया है (एकानामिक एण्ड पोलीटिकल वीक्ली, फ़रवरी 1979)। दुर्भाग्यवश, ब्राह्मणवाद-विरोध विचार-धारा आजकल अपनी पकड व प्रभाव खोती जा रही है । क्योंकि जितने भी ब्राह्णेतर इस कार्य-नीति के सहारे अपने जीवन की उच्च श्रेणियों पर पहुँचे हैं वे इसे त्याग कर दुश्मन के शिबिरों में जा चुके हैं और इसका श्रेय संस्कृतीकरण तथा पाश्च्यातीकरण को जाता है । इन ब्राह्मणेतरों ने ब्राह्मणवाद-विरोध सिद्धान्त के साथ हो सकता है विश्वासघात न किया हो, परन्तु दुश्मन के साथ मिल जरूर गये हैं । ऊँची जाति के ब्राह्मणेतर, विशेषकर जमींदार शूद्र 'सर्वश्रेष्ठ-ब्राह्मण' न सही 'नये ब्राह्मण'अवश्य बन गये हैं जिस से ब्राह्मणवाद की संख्या फूल उठी है । ब्राह्मणवाद-विरोध से लाभान्वित होने वाले ये लोग जाति-श्रेणी की सब से नीची जातियों विशेषकर अछूतों के उत्पीडन से उदासीन हो गये हैं । बल्कि इससे अधिक ये लोग उनकी तरफ़ आक्रमणकारी बन गये हैं । उनकी सहायता क्या करते, उनपर अत्याचार करने लगे हैं । यहाँ तक कि ब्राह्मण खुद कहने लगे हैं कि उनपर अत्याचार करने वाले वे नहीं हैं बल्कि ग़ैरब्राह्मण हैं । ये वही ब्राह्मणेतर अत्याचारी हैं जो कभी ब्राह्मणवाद-विरोधी आन्दोलन में आगे - आगे रहते थे ताकि ब्राह्मणों को सत्ता व अधिकार से निकाल बाहर किया जा सके । जैसे ही उन्होंने ब्राह्मणों को हटाकर स्वयं उन पदों पर कब्जा जमाया वे उन्हीं ब्राह्मणों की नकल करने लगे और क्रूरता में उनसे भी आगे निकल गये । केवल 'जाति-संघर्ष' तक सीमित रहने की यही स्वाभाविक दुर्बलता होती है जिसके कारण इस होड में जीतने वाला अत्याचारियों से जा मिलता है और उनकी संख्या में वृद्धि करता है । यदि शोषितों की सेना में कर्तव्यच्युति एवं परित्याग (भगोडापन) न हो, यदि दिन-प्रतिदिन उसकी शक्ति बढनी है तो इस परिशुद्ध व स्वदेशीय ब्राह्मणवाद-विरोधी कार्य-नीति की उचित शोधना करनी होगी ताकि 'वर्ग-संघर्ष, मार्क्सवादी दृष्टिकोण तथा 'जाति-संघर्ष' का समावेश किया जा सके । मार्क्सवाद तथा ब्राह्मणवाद विरोधी सिद्धान्त को आनन्दपूर्वक टाँक लगा दिया जाय, जिसे हमने वर्ग-जाति-संघर्ष अथवा भारतीय मार्क्सवाद का नाम दिया है, केवल तभी हमें इच्छित परिणाम प्राप्त हो सकते हैं ।

ब्राह्मणवाद

बौध, बाबासाहब अम्बेडकर, महात्मा फूले, नारायण गुरु, पेरियार, लोहिया, वगैरा - सब ने ब्राह्मणवाद को भारत के उत्पीडितों का एक नंबरी दुश्मन कहा ।

ब्राह्मणवाद जिसका दूसरा सुल्झा हुआ नाम हिन्दूमत है - दूसरे धर्मों जैसे - इस्लाम, ईसाइयत या बौधमत की तरह एक धर्म नहीं है । यह एक विचार है जिसके माननेवाले ज़रूरी नहीं कि जनमी ब्राह्मण ही हों - क्षत्र्य, वैश्य बल्कि शूद्र भी हो सकते हैं । बल्कि बहुत सारे ग़ैर ब्राह्मण तो इसके ब्राह्मणों से ज़्यादा मतवाले हैं । कुछ अछूत और क़बायल भी इसके दीवाने होने लगे हैं । यह केन्सर तो ज़्यादा से ज़्यादा फैलता जा रहा है ।

ब्राह्मणहों या दूसरे - किसी को भी ब्राह्मणवाद से कोयी फ़ायदा नहीं मिला । यह केवल शक्तिमानों को कमज़ोरों पर दबाव डालने का एक मंतर है । इसके द्वारा सब से ज़्यादा नुक़सान औरत का हुआ है और संसार में सब से ज़्यादा सतायी जारही स्त्री ब्राह्मणी है । ब्राह्मणी के बाद दूसरा नंबर दूसरे ग़ैर ब्राह्मणों का आता है जो भारत के 90 प्रतिशत निवासी हैं । क्योंकिं यह सब ब्राह्मणवाद से क़रीब तरीन हैं। फिर संसार के दूसरे कमज़ोरों का नंबर आता है जो ब्राह्मणवाद से ज़्यादा दूर हैं ।

इस किताब में ब्राह्मणवाद की कुछ बुनियादी बातों पर रौशनी डाली गयी है । ब्राह्मणवाद का नाश हर समझदार का फ़र्ज़ बनता है ।

मगर मालूम होना चाहिये कि ब्राह्मणवाद को कानून या सरकार के द्वारा नाश नहीं किया जासकता । इसके खिलाफ़ लड़ायी को दिमागों से शुरु करके, घरों से निकालकर, गली कोचों से बढ़ाते हूये पूरे देश में चलानी चाहिये । बेहतर तो यह है कि पूरे देश की फ़िक्र करने की जगह हर कोयी अपने अपने छोटे राष्ट्र (जाति) का मोर्चा बनाये ।

दिमाग़ से शुरु करने की दिशा में यह किताब आपके लिये पहली कड़ी है । अंग्रेजी में दो बार छपी । अब इसका हिन्दुस्तानी अनुवाद आपके हाथ में है ।